

प्रसार दूत

कृषि विज्ञान की अग्रणी पत्रिका

अक्टूबर – दिसम्बर, 2025



कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानान्तरण केन्द्र
भा.कृ.अनु.प.—भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली—110012

संपादकीय

भारत सदियों से कृषि संस्कृति वाला देश रहा है। लेकिन आज की कृषि केवल परंपरा का प्रतीक नहीं, बल्कि सामर्थ्य, विज्ञान, नवाचार और वैश्विक नेतृत्व का आधार बन चुकी है। आज हम यहाँ एक ऐसे महत्वपूर्ण समय पर एकत्रित हुए हैं, जब भारत की कृषि न केवल राष्ट्रीय विकास का प्रमुख स्तंभ है, बल्कि वैश्विक मंच पर भी इसकी सशक्त उपस्थिति को महसूस किया जा रहा है। हमारी कृषि नीति, खेती की पद्धतियाँ, और कृषक समुदाय का योगदान न केवल हमारे देश की खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित कर रहे हैं, बल्कि हम वैश्विक स्तर पर भी कृषि उत्पादों के प्रमुख उत्पादक और निर्यातक बनकर उभरे हैं।

किसान भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है एवं वे ही ग्रामीण समृद्धि के पीछे एक प्रमुख कारक हैं। किसानों के प्रति अपना सम्मान व्यक्त करने के लिए देश हर साल 23 दिसंबर को राष्ट्रीय किसान दिवस मनाता है। इस दिन भारत अपने 5वें प्रधानमंत्री श्री चौधरी चरण सिंह जी के जन्मदिन पर उनको नमन करता है जिन्होंने भारतीय किसानों के जीवन को बेहतर बनाने के लिए कई नीतियों की शुरुआत की। श्री चौधरी चरण सिंह का जन्म 23 दिसंबर, 1902 को उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले के नूरपुर गांव में एक मध्यमवर्गीय किसान परिवार में हुआ था। वे 1979-1980 के बीच भारत के प्रधानमंत्री रहे और देश में कई किसान-अनुकूल भूमि सुधार नीतियों में योगदान दिया जिसमें किसानों को साहूकारों और उनके अत्याचारों से राहत देने के लिए, 1939 में ऋण मोचन विधेयक जैसे महत्वपूर्ण कदम शामिल हैं। यह किसान दिवस पूरे देश में विभिन्न कार्यक्रमों, वाद-विवादों, संगोष्ठियों, प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिताओं, चर्चाओं, कार्यशालाओं, प्रदर्शनियों, निबंध लेखन प्रतियोगिताओं और कार्यों को आयोजित करके मनाया जाता है।

पूसा संस्थान, भारत की कृषि यात्रा का वह केंद्र है जहाँ से हरित क्रांति का प्रकाश पूरे देश में फैला। यह संस्थान कृषि विज्ञान का मंदिर है। इसके वैज्ञानिकों ने 1960 के दशक में जो उच्च उपज वाली गेहूँ की किस्में प्रदान कीं, उन्होंने भारत को खाद्यान्न की कमी से उबारकर आत्मनिर्भर बनाया। आज संस्थान उच्च गुणवत्ता वाले बीजों का विकास, जलवायु-स्मार्ट कृषि अनुसंधान, जैव प्रौद्योगिकी, नैनो-उर्वरकों का नवाचार, डिजिटल कृषि और ड्रोन तकनीक के उन्नत प्रयोग, मिट्टी स्वास्थ्य प्रबंधन, सतत खेती और प्राकृतिक कृषि अनुसंधान जैसे क्षेत्रों में देश का नेतृत्व कर रहा है। संस्थान से निकले वैज्ञानिकों, तकनीकों और नवाचारों ने भारत की कृषि को विश्व स्तर पर प्रतिस्पर्धी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह संस्थान कृषि भविष्य का मार्ग प्रशस्त कर रहा है। आज 'मेक इन इंडिया' की तरह 'Grow in India', 'Farm in India' और 'Feed the World' के नए मंत्र के साथ भारत दुनिया की खाद्य आपूर्ति श्रृंखला को नई शक्ति दे रहा है। यह हमारे किसानों का परिश्रम और हमारी कृषिगत सोच का परिणाम है कि दुनिया आज भारत को कृषि नवाचार और सतत कृषि के एक मॉडल के रूप में देख रही है।

वैश्विक बाजार बदल रहा है, जलवायु बदल रही है, खेती की चुनौतियाँ बदल रही हैं और किसान की जिम्मेदारियाँ भी बढ़ रही हैं। ऐसे समय में परंपरागत पद्धतियों के साथ-साथ नई तकनीक, नए विचार, नए प्रयोग और नए मॉडल जरूरी हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा अनिश्चित हो रही है। तापमान बढ़ रहा है। नई बीमारियों और कीटों का प्रकोप बढ़ रहा है। परंपरागत खेती से आय सीमित रहती है। इन परिस्थितियों में हमारा किसान तभी सफल होगा जब वह नवाचार, विविधिकरण, प्रौद्योगिकी, और उद्यमिता को अपनाएगा।

छोटे किसानों के जीवन स्तर में सुधार लाना और सीमित संसाधनों के बीच अधिक उत्पादन प्राप्त करना आने वाले समय की महत्वपूर्ण चुनौतियाँ होंगी। इसी कारण आधुनिक कृषि तकनीकों का विकास और उनका व्यापक प्रसार हमेशा से आवश्यक रहा है, ताकि खेती को अधिक लाभदायक और रोजगार सृजन का प्रभावी माध्यम बनाया जा सके। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कृषि में नवाचार आवश्यक है, जिससे वर्तमान कृषि उत्पादन और लाभप्रदता से संबंधित समस्याओं के टिकाऊ

समाधान खोजे जा सकें। आज जरूरत है कि किसान फसल उत्पादन के साथ-साथ मूल्य संवर्धन, प्रसंस्करण, पैकेजिंग, ब्रांडिंग, विपणन और आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन पर ध्यान दे। कृषि अब केवल खेती ही नहीं, बल्कि एक संभावनाशील उद्यम है। ड्रोन, AI, सैटेलाइट मैपिंग, सेंसर, स्मार्ट सिंचाई, नैनो-उर्वरक, जैव उर्वरक और डिजिटल प्लेटफॉर्म खेती को नई शक्ति दे रहे हैं। नवाचार केवल तकनीक में नहीं, बल्कि सोच, पद्धति, बाजार और प्रबंधन में भी होना चाहिए। यह नवाचार ही खेती को लाभकारी बनाएगा और किसान की आय बढ़ाएगा। हर वर्ष पूसा संस्थान उन किसानों को सम्मानित करता है, जो नवाचार कर, स्थानीय संसाधनों एवं परिस्थितियों के अनुरूप तकनीकों को परिष्कृत कर, अनुकरणीय योगदान देते हैं। यह भारतीय किसानों के नवाचारों को पहचानने और उनके प्रसार की दिशा में संस्थान द्वारा उठाया गया एक अभिनव कदम है। अन्य किसान भी उनके अनुभवों से लाभान्वित होंगे और नवाचार के लिए प्रोत्साहित होंगे।

प्रसार दूत के इस विशेष अंक में हमने किसान-प्रधान कृषि नवाचार, कृषि में नवाचार द्वारा महिलाओं का सशक्तिकरण, रबी फसलों की बुवाई हेतु आधुनिक बुवाई मशिन एवं पोषक प्रबंधन, अमरुद में बाग प्रबंधन, प्याज़ में बीज उत्पादन, गेहूं में फसल प्रबंधन, मृदा उर्वरकता, निर्यात की संभावनाएँ, राष्ट्रीय कृषि बाज़ार जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर भी प्रकाश डाला गया है। हमें विश्वास है कि यह अंक आपके लिए ज्ञानवर्धक और उपयोगी सिद्ध होगा तथा आप कृषि के इस बदलते परिदृश्य को बेहतर ढंग से समझ सकेंगे। आपकी प्रतिक्रिया हमारे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, कृपया हमें अवश्य बताएं कि आपको यह अंक कैसा लगा।

संपादक



भारत
ICAR

प्रसार दूत

अक्टूबर-दिसम्बर, 2025

वर्ष 30

अंक 4

2025

संरक्षक

डॉ. सीएच. श्रीनिवास राव
निदेशक

डॉ. रविन्द्र पडारिया
संयुक्त निदेशक (प्रसार)

प्रधान सम्पादक

डॉ. ए.के. सिंह

सम्पादक

डॉ. एन.वी. कुंभारे

सम्पादक मंडल

डॉ. कन्हैया सिंह

डॉ. सचिन सुरोशे

डॉ. टीकम सिंह

डॉ. गिरजेश महारा

डॉ. प्रतिभा जोशी

डॉ. वाई पी सिंह

तकनीकी सहयोग

श्री विजय सिंह जाटव

श्री लक्खी राम मीणा

श्री राजेश सिंह

शुल्क और लेख भेजने एवं पत्रिका मंगाने का पता

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान

संस्थान

नई दिल्ली-110012

फोन: 011-25841039, 011-25841670

ई-मेल: incharge_atic@iari.res.in

वेबसाइट: www.iari.res.in

वार्षिक शुल्क ₹ 150/- मनीआईट द्वारा

विषय सूची

सम्पादकीय

- | विषय सूची | पृष्ठ संख्या |
|--|--------------|
| 1. श्री चौधरी चरण सिंह: किसान पुत्र से प्रधानमंत्री तक का सफर – ग्रामीण भारत की विरासत | 1 |
| 2. किसान-प्रधान कृषि नवाचार: सतत उत्पादन, पारिस्थितिक पुनरुद्धार और ग्रामीण परिवर्तन के नए क्षितिज | 4 |
| 3. किसान-नेतृत्व वाले कृषि नवाचार में महिलाओं का सशक्तिकरण | 10 |
| 4. रबी फसलों की बुवाई हेतु आधुनिक बुवाई मशीनें | 17 |
| 5. रबी फसलों में पर्णिय पोषक तत्व प्रबंधन | 21 |
| 6. मृदा उर्वरता प्रबंधन एवं संरक्षण | 23 |
| 7. अमरुद के बागों का स्थापना के उपरान्त प्रबंधन | 29 |
| 8. अनार की उन्नत किस्में एवं बहार प्रबंधन से बढ़ेगी किसानों की आय | 31 |
| 9. प्याज के बीज उत्पादन की उन्नत तकनीकियां | 34 |
| 10. भारत में बेहतर निर्यात संभावनाओं के लिए कृषि वस्तुओं का प्रमाणीकरण | 39 |
| 11. गेहूँ और कद्दू वर्गीय सब्जियों का समन्वित रिले प्रबंधन | 43 |
| 12. बीजीय मसालों (जीरा व सौंफ) के मुख्य रोग एवं उनका प्रबंधन | 46 |
| 13. मौन भूख (हिडन हंगर): समस्या एवं समाधान | 48 |

श्री चौधरी चरण सिंह: किसान पुत्र से प्रधानमंत्री तक का सफर - ग्रामीण भारत की विरासत

अवधेश दीक्षित, पुष्पेन्द्र यादव एवं एन.वी.कुंभारे

भा.कृ.अनु.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

श्री चौधरी चरण सिंह का जीवन एक ऐसे किसान पुत्र की कहानी है, जिसने उत्तर प्रदेश के एक साधारण कृषक परिवार से उठकर देश के प्रधानमंत्री पद तक की यात्रा की और पूरी राजनीति को गांव, किसान और जमीन से जुड़े प्रश्नों के इर्दगिर्द केंद्रित रखा। उनकी राजनीति का मूल केन्द्र हमेशा छोटा किसान, खेतिहर मजदूर और ग्रामीण समाज रहा, इसी कारण उन्हें किसानों का नेता और 'किसान नेता' के रूप में व्यापक पहचान मिली। उनकी जन्मतिथि 23 दिसंबर, जो पूरे देश में 'किसान दिवस' के रूप में मनाया जाता है और उन्हें भारत रत्न से सम्मानित किया जा चुका है, जो उनकी ग्रामीण विरासत की स्वीकृति का प्रतीक है।



प्रारंभिक जीवन और कृषक पृष्ठभूमि

श्री चौधरी चरण सिंह का जन्म 23 दिसंबर 1902 को तत्कालीन संयुक्त प्रांत (आज का उत्तर प्रदेश) के मेरठ जिले के नूरपुर गाँव में एक मध्यमवर्गीय कृषक परिवार में हुआ। उनके पिता मीर सिंह स्वयं खेती करने वाले किसान थे, जो स्थायी और उपजाऊ जमीन की तलाश में समयसमय पर गाँव बदलते रहे और अंततः 1922 में भदौला गाँव में बस गए। बचपन से ही चरण सिंह ने ग्रामीण गरीबी, अल्प भूमि, बँटाई, सूदखोरी और ज़मींदारी प्रथा के कारण किसानों पर पड़ने वाले अन्याय को नज़दीक से देखा।

उनके बचपन के समय उत्तर भारत में ज़मींदारी व्यवस्था हावी थी, जिसमें बड़े ज़मींदार ब्रिटिश राजस्व प्रणाली के तहत किसानों से लगान वसूलते थे और अक्सर ऊँचे किराए तथा मनमानी बेदखली के माध्यम से कृषकों का शोषण करते थे। इसी वातावरण

में पलेबढ़े चरण सिंह के मन में यह दृढ़ धारणा बनी कि भारत में सच्चा लोकतंत्र तभी संभव है, जब ज़मींदारी खत्म हो और जमीन पर असल हल चलाने वाले किसान को ही अधिकार और स्वामित्व मिले। यही अनुभव आगे चलकर उनके भूमि सुधार और 'किसान मालिकाना हक' की विचारधारा की नींव बने। शिक्षा, वकालत और राजनीति में प्रवेश साधारण किसान परिवार से आने के बावजूद चरण सिंह ने शिक्षा को साधन बनाकर आगे बढ़ने का मार्ग चुना। उन्होंने 1919 में मैट्रिक पास किया, 1923 में आगरा कॉलेज से बी.एससी. की डिग्री प्राप्त की और 1925 में इतिहास विषय से एम.ए. पूरा किया। इसके बाद उन्होंने विधि की पढ़ाई की और गाज़ियाबाद में सिविल वकील के रूप में प्रैक्टिस शुरू की। वकालत के दौरान उन्हें ग्रामीण कर्ज, भूमि विवाद और खेती से जुड़ी कानूनी समस्याओं से लगातार रूबरू होना पड़ा, जिससे उनके भीतर किसानों के लिये विशेष संवेदनशीलता और व्यावहारिक समझ विकसित हुई।

राजनीतिक सफ़र की शुरुआत

श्री चौधरी चरण सिंह 1929 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से जुड़े और राष्ट्रवादी आंदोलन के साथसाथ गाँवों में संगठनात्मक काम में सक्रिय हो गए। उन्होंने 1930 के नमक सत्याग्रह और 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लिया और कई बार जेल भी गए। 1940 से 1946 के बीच वे मेरठ जिला कांग्रेस के अध्यक्ष रहे और जाट तथा अन्य कृषक समुदायों के बीच उनके नेतृत्व की पकड़ मजबूत होती गई। ग्रामीण कर्जमाफी, लगान में राहत और किसानों की सुरक्षा जैसे मुद्दों ने उन्हें जल्दी ही किसानों का लोकप्रिय नेता बना दिया। विधायक, मंत्री और उत्तर प्रदेश में भूमि सुधार श्री चरण सिंह पहली बार 1937 में संयुक्त प्रांत की विधान सभा के सदस्य चुने गए और इसके बाद 1946, 1952, 1962 तथा 1967 में भी ग्रामीण क्षेत्र से ही विधायक बने। आज़ादी से पहले और बाद दोनों ही दौर में वे भूमि सुधार और किसान हितैषी कानूनों के निर्माण में सक्रिय रहे। 1939 के 'ऋण मुक्ति विधेयक' (Debt Redemption Bill) के निर्माण में उनकी प्रमुख भूमिका मानी जाती है, जिसका उद्देश्य किसानों पर चढ़े असहनीय कर्ज के बोझ को हल्का करना और सूदखोरी पर नियंत्रण लगाना था। स्वतंत्रता के बाद उत्तर प्रदेश में ज़मींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार के लिए जो कानून बने, उनमें चरण सिंह की वैचारिक एवं व्यावहारिक भूमिका निर्णायक थी। 1950 के दशक की शुरुआत में ज़मींदारी उन्मूलन के माध्यम से लाखों

किसानों को सीधे राज्य से भूमि का अधिकार मिला, जिससे मध्यस्थ ज़मींदारों की भूमिका समाप्त होने लगी। श्री चरण सिंह ने राजस्व, कृषि, वन, न्याय, गृह और स्थानीय स्वशासन जैसे कई महत्वपूर्ण विभागों का दायित्व संभाला और छोटेमध्यम किसानों की स्थिति मज़बूत करने के लिये भूमि पर अधिकतम सीमा (सीलिंग) और भूमि जोत के अत्यधिक बंटवारे पर रोक जैसे प्रावधानों को आगे बढ़ाया। 1960 के दशक में वे उत्तर प्रदेश के 'भूमि धारण अधिनियम' (Land Holding Act) से जुड़े प्रयासों के मुख्य प्रेरकों में रहे, जिसका उद्देश्य बड़ी जोतों को सीमित करना और किसानों के लिए आर्थिक रूप से व्यवहार्य खेतों का संरक्षण करना था। इन कदमों ने भले ही पूरी तरह समानता स्थापित न की हो, लेकिन उत्तर प्रदेश जैसे विशाल राज्य में भूमि संरचना को अधिक न्यायपूर्ण बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण बदलाव अवश्य किए और श्री चरण सिंह को किसानों का सच्चा हिमायती नेता बना दिया। राज्य की राजनीति से प्रधानमंत्री तक उत्तरप्रदेश की राजनीति में श्री चरण सिंह एक सख्त, ईमानदार और अनुशासित प्रशासक के रूप में पहचाने गए, जो भ्रष्टाचार, पक्षपात और सरकारी संसाधनों के दुरुपयोग के घोर विरोधी थे। 1951 से 1967 के बीच वे लगभग हर कांग्रेस सरकार में मंत्री रहे, लेकिन किसानों और ग्रामीण हितों की उपेक्षा तथा बढ़ते भ्रष्टाचार को लेकर वे पार्टी नेतृत्व से असहमत होते गए। 1967 में उन्होंने कांग्रेस छोड़कर अन्य दलों के साथ मिलकर संयुक्त विधायक दल (संयुक्त विधायक दल सरकार) के तहत गैरकांग्रेसी गठबंधन सरकार बनाई और 3 अप्रैल 1967 को उत्तर प्रदेश के पहले गैरकांग्रेसी मुख्यमंत्री बने। हालाँकि यह सरकार 1968 में गिर गई, वे फरवरी 1970 में फिर से मुख्यमंत्री बने, लेकिन यह सरकार भी राजनीतिक खींचातानी के कारण ज्यादा समय तक नहीं चल सकी। इन अल्पकालिक सरकारों के बावजूद उन्होंने राज्य स्तर पर भ्रष्टाचार के खिलाफ और भूमि सुधार के पक्ष में कड़े रुख के कारण खुद को ग्रामीण समाज के सशक्त नेता के रूप में स्थापित किया।

प्रधानमंत्री तक का सफ़र

राष्ट्रीय स्तर पर वे आपातकाल (1975-77) के विरोध में अग्रिम पंक्ति के नेताओं में रहे। 25 जून 1975 को आपातकाल लागू होने के बाद उन्हें गिरफ्तार कर तिहाड़ जेल भेजा गया, जहाँ वे मार्च 1977 तक निरुद्ध रहे। 1977 के आम चुनाव में आपातकाल विरोधी शक्तियाँ एक साथ आईं और जनता पार्टी सत्ता में आई, जिसमें श्री चौधरी चरण सिंह गृह मंत्री तथा बाद में उपप्रधानमंत्री और वित्त मंत्री बने। आंतरिक मतभेदों और सत्ता संघर्ष के कारण मोरारजी देसाई सरकार गिरने के बाद 28 जुलाई 1979 को वे देश के पाँचवें प्रधानमंत्री बने। श्री चरण सिंह की सरकार अल्पमत में थी और इंदिरा गांधी की कांग्रेस के बाहरी समर्थन पर निर्भर थी। जब उन्होंने आपातकाल के दौरान हुए कथित दुरुपयोग के मामलों को वापस लेने से इनकार किया तो कांग्रेस ने समर्थन वापस ले लिया। नतीजतन वे संसद में विश्वास मत का सामना किए बिना ही 14

जनवरी 1980 को पद से हट गए। यद्यपि उनका कार्यकाल केवल लगभग छह माह का रहा, किंतु एक किसान पुत्र का देश के सर्वोच्च कार्यपालक पद तक पहुँचना ग्रामीण भारत की राजनीतिक शक्ति का प्रतीक बन गया। कृषि विमर्श, विचारधारा और लेखन श्री चौधरी चरण सिंह केवल राजनेता ही नहीं, बल्कि कृषिअर्थशास्त्र और भूमि प्रश्न पर गंभीर चिंतक और लेखक भी थे। उन्होंने ज़मींदारी, सहकारी खेती, गरीबी, भूमि स्वामित्व और भूमि जोत के बंटवारे जैसे विषयों पर अनेक किताबें और पुस्तिकाएँ लिखीं, जिनमें "Abolition of Zamindari", "Cooperative Farming XRayed", "India's Poverty and Its Solution", "Peasant Proprietorship or Land to the Workers" और "Prevention of Division of Holdings Below a Certain Minimum" प्रमुख हैं। इन लेखनों में उनका केंद्रीय तर्क यह था कि न तो सामंती ज़मींदारी व्यवस्था और न ही विशाल कॉरपोरेट या सामूहिक खेती, दोनों ही भारत के ग्रामीण ढाँचे के अनुकूल हैं; सबसे न्यायपूर्ण और टिकाऊ मॉडल छोटेमध्यम कृषक मालिकाना हक (peasant proprietorship) का है। वे सहकारी या सामूहिक खेती के अत्यधिक केंद्रीकृत रूपों की आलोचना करते थे, क्योंकि उनके अनुसार इससे नए नौकरशाही वर्ग और राजनीतिक मध्यस्थ पैदा होंगे और वास्तविक खेतिहर किसान निर्णयप्रक्रिया से बाहर हो जाएगा। उनकी दृष्टि में कृषि समृद्धि के तीन मुख्य आधार थे: असल हल चलाने वाले किसान का जमीन पर सुरक्षित स्वामित्व के अत्यधिक बंटवारे पर रोक और आर्थिक रूप से व्यवहार्य जोतों का संरक्षण सिंचाई, ग्रामीण अवसंरचना, सस्ती ऋण व्यवस्था और तकनीक के प्रसार में राज्य की सक्रिय भूमिका उनके विचारों में गाँधीवादी नैतिकता, आर्य समाज की सुधारवादी सोच और ग्रामीण शक्ति संरचनाओं की व्यावहारिक समझ का एक अनूठा मेल दिखाई देता है। वे छोटे किसान परिवार को केवल आर्थिक इकाई नहीं, बल्कि नैतिक और सामाजिक इकाई भी मानते थे और चाहते थे कि नीतिनिर्माण में उसकी गरिमा और स्वायत्तता की रक्षा हो। 1985 में उन्हें लकवा (stroke) पड़ा और 29 मई 1987 को 84 वर्ष की आयु में नई दिल्ली में उनका निधन हो गया, जिससे लगभग पाँच दशकों से अधिक लंबा सार्वजनिक जीवन समाप्त हुआ। उनकी स्मृति में दिल्ली के राजघाट परिसर में 'किसान घाट' नामक स्मारक बनाया गया, जो उन्हें देश के प्रमुख राष्ट्रीय नेताओं की श्रेणी में स्थान देता है।

ग्रामीण भारत की विरासत

श्री चौधरी चरण सिंह ग्रामीण भारत की उस अमूल्य विरासत के प्रतीक हैं, जिन्होंने कभी अपनी जड़ों को नहीं भुलाया। एक साधारण किसान पुत्र से देश के प्रधानमंत्री बनने तक की उनकी यात्रा स्वयं में ग्रामीण भारत की संघर्षपूर्ण लेकिन गौरवपूर्ण गाथा है। उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले के नूरपुर गाँव में 1902 में जन्मे श्री चरण सिंह ने ज़मींदारी प्रथा के अत्याचार, सूदखोरों की लूट और छोटे किसानों की बदहाली को नजदीक से देखा। यही अनुभव उनकी

राजनीति का आधार बने, जहाँ उन्होंने भूमि सुधार, कर्जमुक्ति और खेतिहर मजदूरों को मालिकाना हक दिलाने पर जोर दिया। उत्तर प्रदेश में राजस्व एवं कृषि मंत्री के रूप में उन्होंने 1950 के दशक में ज़मींदारी उन्मूलन कानूनों को लागू कर लाखों किसानों को सीधे भूमि स्वामित्व प्रदान किया। 1960 के भूमि धारण अधिनियम से बड़ी ज़मीनों पर सीमा लगाई गई, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था अधिक समावेशी बनी। उनकी पुस्तकें जैसे “ज़मींदारी उन्मूलन” और “किसान मालिकाना हक” ने छोटे किसान को राष्ट्र की आर्थिक रीढ़ घोषित किया। 1979 में प्रधानमंत्री बनकर उन्होंने ग्रामीण हितों को राष्ट्रीय पटल पर स्थापित किया। उनकी विरासत आज भी किसान आंदोलनों, एमएसपी और भूमि अधिकारों की बहस में जीवंत है। 2024 में भारत रत्न से सम्मानित होकर उन्होंने सिद्ध किया कि ग्रामीण भारत की आवाज़ शासन का अभिन्न अंग है। यह विरासत न केवल नीतिगत परिवर्तन, बल्कि किसानों की गरिमा और स्वावलंबन की प्रेरणा है।

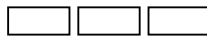
देश के किसानों एवं कृषि के प्रति सोच

श्री चौधरी चरण सिंह की दृष्टि में किसान राष्ट्र की आत्मा हैं। उन्होंने कहा था, “भारत की समृद्धि का आधार ग्रामीण भारत है, और ग्रामीण भारत का आधार किसान है”। उनकी सोच स्पष्ट थी कि छोटे-मध्यम किसानोंको मालिकाना हक ही देश की कृषि को मजबूत बनाएगा। एक प्रसिद्ध उद्धरण में वे बोले, “ज़मींदारी उन्मूलन के बिना सच्चा स्वराज असंभव है।” वे सहकारी खेती के विरुद्ध थे, क्योंकि इससे किसान की स्वायत्तता छिन जाती। “किसान को जमीन का मालिक बनाओ, तभी देश समृद्ध होगा,” यह उनका मूल मंत्र था। उन्होंने जोर दिया कि सिंचाई, सस्ता ऋण और तकनीक छोटे किसानों तक पहुँचे। “कृषि राष्ट्र की रीढ़ है, इसे मजबूत करो तो देश मजबूत होगा,” उनके शब्द आज भी प्रासंगिक हैं। श्री चरण सिंह की यह विचारधारा किसान आंदोलनों से लेकर

न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) बहस तक जीवंत है। उनकी विरासत हमें सिखाती है कि किसानों की गरिमा और समृद्धि ही भारत का भविष्य है।

राष्ट्रीय किसान दिवस की शुरुआत

वर्ष 2001 में भारत सरकार ने 23 दिसंबर को औपचारिक रूप से ‘किसान दिवस’ (National Farmers’ Day) घोषित किया, जो हर वर्ष देश भर में किसानों के योगदान को स्मरण करने के लिए मनाया जाता है और जिसका सीधा संबंध चौधरी चरण सिंह के किसानकेंद्रित जीवन और राजनीति से जुड़ा जाता है। उनका परिवार भी किसानों और ग्रामीण राजनीति से जुड़ा रहा। उनकी पत्नी गायत्री देवी 1980 में लोकसभा की सदस्य चुनी गईं और किसान मुद्दों पर सक्रिय रहीं। उनके पुत्र चौधरी अजीत सिंह ने 1996 में राष्ट्रीय लोकदल (RLD) की स्थापना की, जो पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसानों, विशेषकर जाट कृषक समुदाय, के बीच एक प्रभावशाली राजनीतिक शक्ति रहा। बाद के वर्षों में उनके पौत्र जयंत चौधरी भी किसानों के प्रश्नों, विशेषकर कृषि कानूनों और समर्थन मूल्य जैसी नीतियों पर राष्ट्रीय बहस में प्रमुख चेहरा बने। आज भी जब देश में भूमि अधिग्रहण, किसान आय, ऋणमाफी, न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) और बाजार सुधार जैसे मुद्दों पर तीखी बहस चलती है, तब श्री चौधरी चरण सिंह की ‘किसान मालिकाना हक’, ग्रामीण समानता और विकेंद्रीकृत लोकतंत्र की अवधारणाएँ प्रासंगिक प्रतीत होती हैं। किसान आंदोलनों के दौरान उनके विचारों और उद्धरणों का बारबार उल्लेख किया जाता है, और उन्हें किसानों की अस्मिता और अधिकारों की लड़ाई का प्रतीक माना जाता है। हाल के वर्षों में उन्हें ‘भारत रत्न’ से सम्मानित किया जाना इस बात की पुष्टि है कि स्वतंत्र भारत के राजनीतिक-आर्थिक इतिहास में एक किसान पुत्र से प्रधानमंत्री बने इस नेता की विरासत आज भी जीवंत और प्रेरणादायक मानी जाती है।



किसान-प्रधान कृषि नवाचार: सतत उत्पादन, पारिस्थितिक पुनरुद्धार और ग्रामीण परिवर्तन के नए क्षितिज

प्रतिभा जोशी, पुनीता पी, ए के सिंह, एस चक्रवर्ती, नफीस अहमद एवं एन वी कुंभारे

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारतीय कृषि वर्तमान में एक गहन परिवर्तनकारी चरण से गुजर रही है, जहाँ पारंपरिक उत्पादन प्रणालियाँ अनेक बहुआयामी चुनौतियों का सामना कर रही हैं। बदलते जलवायु पैटर्न, अस्थिर वर्षा वितरण, भूमि और जल जैसे प्राकृतिक संसाधनों का निरंतर क्षरण, उत्पादन लागत में तीव्र वृद्धि, कृषि मजदूरी की कमी, बाजारों में अस्थिरता, फसल विविधता में गिरावट तथा उत्पादकता के ठहराव जैसी प्रवृत्तियाँ आज के कृषि तंत्र पर गंभीर संरचनात्मक दबाव उत्पन्न कर रही हैं। इन परिस्थितियों में यह स्पष्ट होता जा रहा है कि भारत की कृषि केवल उत्पादकता बढ़ाने का प्रश्न नहीं रही, बल्कि यह स्थायित्व, अनुकूलनशीलता, और सामाजिक-आर्थिक समावेशन की दिशा में एक समग्र पुनर्विचार की मांग करती है। परंपरागत रूप से कृषि नवाचारों का प्राथमिक स्रोत वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थान और सरकारी विस्तार तंत्र रहे हैं, जिन्होंने “प्रयोगशाला से खेत तक” (Lab to Land) मॉडल के माध्यम से तकनीकों का प्रसार किया। इस व्यवस्था में किसान प्रायः एक तकनीक के ‘अंतिम उपभोक्ता’ के रूप में परिभाषित किए गए, जिनकी भूमिका प्रयोगशाला में विकसित विधियों और प्रौद्योगिकियों को अपनाने तक सीमित रही। किंतु पिछले दो दशकों में, इस मॉडल की सीमाएँ अधिक स्पष्ट हुई हैं, विशेषकर वहाँ जहाँ स्थानीय पर्यावरणीय व सामाजिक संदर्भ राष्ट्रीय या प्रादेशिक स्तर पर विकसित तकनीकों से मेल नहीं खाते। इसी परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण भारत के विभिन्न हिस्सों से एक नई और अधिक गतिशील प्रवृत्ति उभरकर सामने आई है, किसान-नेतृत्व वाली नवाचार प्रणाली (Farmer-Led Innovation System)। किसान-नेतृत्व वाले नवाचार कृषि अनुसंधान की पारंपरिक दिशा को चुनौती देते हुए उसे परिशिष्ट नहीं, बल्कि पूरक और स्थानीय रूप से उपयुक्त बनाते हैं। ये नवाचार स्थानीय पारिस्थितिकी, संसाधन उपलब्धता, सामाजिक संरचना, और जोखिम प्रबंधन के अनुभवों पर आधारित होते हैं। किसान अपने खेतों में प्रतिदिन होने वाले परिवर्तनों के प्रत्यक्ष साक्षी होते हैं; वे जलवायु, कीट-व्यवहार, मिट्टी की गुणवत्ता और फसल वृद्धि की सूक्ष्म गतिशीलताओं को न केवल समझते हैं, बल्कि उनके अनुरूप प्रयोग भी करते हैं। यह सतत प्रयोगशीलता ही उन्हें नवाचारक बनाती है वे सीमित संसाधनों, अस्थिर बाजारों और प्रकृति की अनिश्चितताओं के मध्य व्यावहारिक व स्थिर समाधान खोजते हैं। भारत के विभिन्न agro-ecological क्षेत्रों से प्राप्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि ऐसे किसान-नेतृत्व वाले नवाचारों ने अनेक स्तरों पर उल्लेखनीय परिणाम दिए हैं। उदाहरणस्वरूप, जैविक कीटनाशी,

कम लागत वाले औजार, पोषक तत्व प्रबंधन के स्थानीय फार्मूले, सूक्ष्म सिंचाई तकनीकों का स्थानीय अनुकूलन, और परंपरागत ज्ञान पर आधारित जलवायु-स्मार्ट पद्धतियाँ न केवल उत्पादन लागत में कमी लाने में सफल रही हैं, बल्कि फसल उत्पादकता और प्राकृतिक संसाधनों की उपयोग-दक्षता में भी सुधार लायी हैं। इससे खेती प्रणाली अधिक स्थायित्वपूर्ण, पर्यावरण-अनुकूल और लघु एवं सीमांत किसानों के लिए व्यावहारिक बन रही है। किसान अब केवल तकनीकी ज्ञान के “उपयोगकर्ता” नहीं, बल्कि ज्ञान-निर्माता, प्रयोगकर्ता और कृषि परिवर्तन के साझा नीति-निर्माता के रूप में उभर रहे हैं। इस परिवर्तनशील परिदृश्य में आवश्यक है कि नीतिगत ढाँचे, अनुसंधान संस्थान और विस्तार सेवाएँ इस नवाचार को सह-ज्ञान (co-creation of knowledge) की भावना से देखें। किसान नवाचारों के मूल्यांकन, सत्यापन, संरक्षण, और प्रसार के लिए एक संस्थागत तंत्र की स्थापना जैसे किसान नवाचार रजिस्ट्री, किसान वैज्ञानिक संवाद मंच, और सहभागी अनुसंधान मॉडल इस दिशा में निर्णायक भूमिका निभा सकते हैं। अतः भारत की कृषि व्यवस्था के भावी विकास के लिए यह आवश्यक है कि नीति-निर्माण में इन किसान नवाचारों को औपचारिक मान्यता दी जाए, उन्हें समग्र कृषि अनुसंधान-प्रसार प्रणाली का अभिन्न अंग बनाया जाए, और स्थानीय ज्ञान प्रणालियों को वैज्ञानिक अनुसंधान के समान महत्व दिया जाए। यही वह मार्ग है जो भारत को एक सहभागी, लचीली और नवाचार-संचालित कृषि व्यवस्था की ओर अग्रसर कर सकता है। किसान-नेतृत्व वाली नवाचारों (Farmer-led Innovations) महज़ तकनीकी सुधारों का परिणाम नहीं हैं, बल्कि वे एक जटिल सामाजिक-वैज्ञानिक प्रक्रिया का प्रत्यक्ष अभिव्यक्त रूप हैं जिसमें क्षेत्रीय पारिस्थितिकी, स्थानीय ज्ञान, अनुभवजन्य प्रयोग, जोखिम प्रबंधन क्षमता, तथा संस्थागत संपर्क संयुक्त रूप से कार्य करते हैं। कृषि नवाचार को परंपरागत रूप से “विज्ञान द्वारा निर्मित ज्ञान” के रूप में देखा गया है, जिसके अंतर्गत किसान मात्र “तकनीक अपनाने वाले उपयोगकर्ता” माने जाते रहे हैं। किंतु वास्तविकता यह है कि कृषि नवाचार का वास्तविक केंद्र हमेशा खेत ही रहा है, जहाँ किसान अपनी परिस्थितियों, संसाधनों और अनुभवों के आधार पर लगातार परीक्षण, संशोधन व परिष्करण की प्रक्रियाएँ अपनाते हैं। यह प्रक्रिया कृषि अनुसंधान को नीचे से ऊपर (bottom-up) दिशा प्रदान करती है, जो वास्तविक, संदर्भ-विशिष्ट और सामाजिक रूप से अधिक स्वीकार्य होती है।

किसान नवाचारों की प्रमुख विशेषता यह है कि वे समस्याओं की पहचान और समाधान दोनों की प्रक्रिया को स्थानीय स्तर पर एकीकृत करते हैं। जलवायु अस्थिरता, बाजार दबाव, इनपुट लागत, जल की अनुपलब्धता, और श्रम संकट जैसी चुनौतियों के प्रत्यक्ष अनुभव से किसान स्वप्रेरित रूप से ऐसे तरीके विकसित करते हैं जो स्थान-विशिष्ट, कम लागत वाले, उच्च अनुकूलनशील और त्वरित प्रसार योग्य होते हैं। इन नवाचारों की जीवंतता इस तथ्य में निहित है कि ये न केवल उत्पादन प्रणाली को पुनर्गठित करते हैं, बल्कि वे सामुदायिक सहयोग, संसाधन-साझाकरण, और स्थानीय ज्ञान के पुनर्मूल्यांकन को भी प्रोत्साहित करते हैं जिससे कृषि प्रणाली अपनी पारिस्थितिक सीमाओं के भीतर अधिक स्थायित्व व लचीलापन प्राप्त करती है।

किसान नवाचारों के स्रोत सामान्यतः तीन स्तरों पर कार्य करते हैं। पहला, पारंपरिक ज्ञान प्रणाली, जो पीढ़ियों से संचित अनुभव, मौसम-चक्र की समझ, स्थानीय जैव-विविधता के संरक्षण और कृषि-जीविका के ऐतिहासिक अभ्यासों पर आधारित होती है। दूसरा, आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान का प्रभाव, जो ICAR, KVKs, कृषि विश्वविद्यालयों और विस्तार सेवाओं के माध्यम से प्राप्त औपचारिक तकनीकी सूचनाओं का स्थानीय रूपांतरण करते हैं। तीसरा, स्थानीय संसाधनों और सामाजिक पूँजी का रचनात्मक उपयोग, जिसमें सामूहिक श्रम, समुदाय आधारित निर्णय प्रणाली, पारंपरिक बीज नेटवर्क, और पशुधन-आधारित पोषक तत्व चक्र जैसे तत्व कृषि नवाचार के आधार स्तंभ बनते हैं। इन तीनों स्रोतों का संलयन एक "हाइब्रिड ज्ञान प्रणाली" निर्मित करता है, जो स्थानीय और औपचारिक ज्ञान के बीच पुल का कार्य करती है।

भारत की कृषि में वर्तमान संरचनात्मक संकट जैसे भूमि जोतों का सूक्ष्मकरण, भूजल-स्तर में गिरावट, मृदा में कार्बनिक पदार्थ की कमी, रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों पर निर्भरता, श्रम लागत में वृद्धि, बाजार की अनिश्चितता, और जलवायु परिवर्तनों से उत्पन्न अस्थिरता यह स्पष्ट संकेत देते हैं कि केवल संस्थागत अनुसंधान द्वारा विकसित तकनीकों पर निर्भर रहना अब व्यावहारिक विकल्प नहीं है। बड़े भूधारकों या व्यावसायिक फसलों के लिए विकसित कई तकनीकों छोटे और सीमांत किसानों के लिए उपयुक्त नहीं ठहरतीं, क्योंकि इनकी लागत अधिक होती है, यांत्रिक उपकरण छोटी जोतों के अनुरूप नहीं होते, और स्थानीय अनुकूलन हेतु पर्याप्त प्रशिक्षण व संसाधन उपलब्ध नहीं होते। इस संदर्भ में किसान-नेतृत्व वाली नवाचारों एक अनिवार्य रणनीतिक प्रतिक्रिया के रूप में उभरी हैं, जो कृषि प्रणाली को अधिक न्यायसंगत, आत्मनिर्भर और सामुदायिक रूप से सशक्त बनाती हैं। इन नवाचारों का महत्व मात्र तकनीकी सुधार तक सीमित नहीं है; ये ज्ञान के लोकतंत्रीकरण (Democratization of Knowledge) की प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हैं। जब किसान स्वयं प्रयोगकर्ता और समाधान-निर्माता की भूमिका निभाते हैं, तो वे न केवल कृषि

प्रणाली की अनुकूलन क्षमता बढ़ाते हैं, बल्कि अपनी सामाजिक स्थिति, आत्मविश्वास और निर्णय क्षमता को भी सशक्त करते हैं। नीति के दृष्टिकोण से, किसान-नेतृत्व वाली नवाचारों "सह-ज्ञान निर्माण" (Co-creation of Knowledge) की नई परिकल्पना प्रस्तुत करती हैं, जिसमें अनुसंधान संस्थान, विस्तार एजेंसियाँ, और किसान समुदाय सहयोगी भागीदार के रूप में कार्य करते हैं। अतः, भविष्य की सतत कृषि नीतियों के लिए यह आवश्यक है कि इन नवाचारों को औपचारिक रूप से मान्यता दी जाए, उनके प्रसार के लिए सहभागी मंच विकसित किए जाएँ, और उन्हें राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली में समाहित किया जाए। यही दृष्टिकोण भारत को एक सशक्त, समावेशी और नवाचार-आधारित कृषि भविष्य की दिशा में अग्रसर कर सकता है।

ये उदाहरण दर्शाते हैं कि किस प्रकार किसान स्थानीय पारिस्थितिकी, संसाधन सीमाओं और बाजार अनिश्चितताओं के बीच नए समाधान विकसित करते हैं और उन्हें व्यवहारिक कृषि प्रणालियों में रूपांतरित करते हैं। इन नवाचारियों की यात्राएँ यह प्रमाणित करती हैं कि किसान-नेतृत्व वाली नवाचारों केवल तकनीकी सुधार नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक सीख, पारिस्थितिक अनुकूलन, उद्यमिता विकास, और संस्थागत सहभागिता के गहरे नेटवर्क से उत्पन्न होती हैं। प्रत्येक किसान की कहानी एक विशिष्ट समस्या-प्रेरित प्रयोग, ज्ञान-आधारित सुधार और सामुदायिक प्रसार की प्रक्रिया को उजागर करती है, जिसके माध्यम से स्थानीय और क्षेत्रीय स्तर पर उत्पादन, उत्पादकता, आय, मिट्टी-जल स्वास्थ्य और सामाजिक सशक्तिकरण में उल्लेखनीय सुधार संभव हुआ है। ये मामले न केवल कृषि प्रणालियों की जटिलताओं को बेहतर समझने में सहायक हैं, बल्कि भविष्य के अनुसंधान, नीति निर्माण और विस्तार तंत्रों के लिए महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि भी प्रदान करते हैं।

1. श्री सतीश बाबू गड्डे (एलुरु, आंध्र प्रदेश): पशु-आधारित पुनरुत्पादक कृषि का अभिनव मॉडल

श्री सतीश बाबू गड्डे का नवाचार भारतीय पुनरुत्पादक कृषि (regenerative agriculture) का एक अद्वितीय और सशक्त उदाहरण है, जहाँ पशुधन और मिट्टी विज्ञान के पारंपरिक पारिस्थितिक संबंधों को वैज्ञानिक रूप से पुनर्स्थापित किया गया है। लगभग चार दशकों से अधिक समय तक कृषि के विविध आयामों में प्रयोग करते हुए, उन्होंने एक ऐसा खेती मॉडल विकसित किया है जिसमें गाय-भैंसों की प्राकृतिक गतिविधि चरना, गोबर और मूत्र का नियंत्रित वितरण, और खेत में उनकी नियमित गति, मिट्टी की संरचना, सूक्ष्मजीवी समुदायों और जल धारण क्षमता को नाटकीय रूप से पुनर्जीवित करती है। यह मॉडल किसी भी रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक या बाहरी इनपुट पर निर्भर नहीं करता और संपूर्ण रूप से प्राकृतिक पदार्थों के पोषक-चक्रण पर आधारित एक स्वनिर्भर प्रणाली का रूप लेता है।

समय के साथ किए गए उनके प्रयोग यह दर्शाते हैं कि पशुधन की निरंतर उपस्थिति मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ (organic matter) बढ़ाती है, जिससे मृदा की जल-संग्रहण क्षमता लगभग 40-50% तक बढ़ती है। यह क्षमता विशेष रूप से पश्चिम गोदावरी जैसे वर्षा-आधारित और अर्ध-आर्द्र कृषि क्षेत्रों में जल प्रबंधन का एक व्यवहार्य विकल्प प्रदान करती है। गड्डे के प्रयोगों में पाया गया कि जिन प्लॉट्स में नियमित पशु-गतिविधि होती है, वहाँ की मिट्टी की संरचना ढेलेदार (crumb-structured) हो जाती है, जो वातायन (aeration), जड़ विकास, और सूक्ष्मजीवी सक्रियता के लिए आदर्श होती है। उनका मॉडल केवल मिट्टी पुनर्जनन तक सीमित नहीं है; यह पशुधन स्वास्थ्य में भी सुधार करता है। नियमित चराई, संतुलित आहार एवं ऊर्जावान प्रबंधन से पशु-स्वास्थ्य मजबूत होता है, जिससे दुग्ध उत्पादकता में 15-20% की वृद्धि और मास्टाइटिस जैसे रोगों में उल्लेखनीय कमी देखी गई है। इससे किसानों का पशु-चिकित्सा व्यय लगभग समाप्त हो जाता है, जिससे खेती की कुल लागत में भारी कमी आती है।

संस्थागत स्तर पर, उनके मॉडल को भारतीय मिट्टी विज्ञान संस्थान, आईसीएआर-आईआईआरआर तथा स्थानीय केवीके द्वारा परीक्षणों और मृदा विश्लेषणों के माध्यम से वैज्ञानिक मान्यता मिली। परीक्षणों में पाया गया कि पशु-आधारित पुनरुत्पादक मॉडल न केवल मृदा उपजाऊपन बढ़ाता है बल्कि सिंथेटिक उर्वरकों की उपयोग दर को 50-70% तक कम करने में सक्षम है। पश्चिम गोदावरी जिले में इस मॉडल को प्रदर्शित करने के बाद 120 से अधिक किसानों ने इसे अपनाया, जिसके परिणामस्वरूप उपज में 25-30% वृद्धि, इनपुट लागत में उल्लेखनीय कमी, और सूखा-प्रवण क्षेत्रों में लचीलापन बढ़ा। श्री गड्डे स्वयं अपने अनुभवों में बताते हैं कि “मेरे खेत में रासायनिक उर्वरक पूरी तरह समाप्त हो चुके हैं। केवल पशुधन-आधारित प्राकृतिक पोषण से मिट्टी इतनी सक्षम हो गई कि सूखे वर्षों में भी फसलें हरी रहती हैं।” उनकी यह टिप्पणी पुनरुत्पादक कृषि सिद्धांतों की व्यावहारिक मजबूती को रेखांकित करती है। यह मॉडल न केवल उनका व्यक्तिगत नवाचार है बल्कि क्षेत्रीय किसानों के लिए एक व्यावहारिक और विस्तारयोग्य दृष्टिकोण प्रदान करता है, जिसकी प्रभावशीलता उन्हें भारत के प्रमुख नवाचारी किसानों में स्थापित करती है।

2. श्री संजीव कुमार (चकवाड़ा, वैशाली जिला, बिहार): बीज उद्यमिता, तकनीकी नवाचार और ज्ञान-सशक्तिकरण का मॉडल

श्री संजीव कुमार बिहार के उन अग्रणी नवाचारी किसानों में से हैं जिन्होंने स्थानीय स्तर पर बीज गुणवत्ता, फसल उत्पादकता और किसान-से-किसान तकनीकी प्रसार के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उच्च-गुणवत्ता तथा क्षेत्र-विशिष्ट सब्जियों के बीज उत्पादन में उनकी विशेषज्ञता विशेष रूप से फूलगोभी की उन्नत किस्मों के विकास से पहचान में आई, जिन्होंने पारंपरिक किस्मों की तुलना में 40-50 प्रतिशत अधिक उपज, बेहतर रोग-

सहिष्णुता और विपणन गुणवत्ता प्रदान की। उनका बीज-विकास मॉडल जैविक पोषक तत्व प्रबंधन, वैज्ञानिक क्रॉस-फर्टिलाइजेशन तकनीकों, नियंत्रित परागण व्यवस्था और खेत-स्तरीय गुणवत्ता नियंत्रण को संगठित रूप से जोड़ता है। उन्होंने क्षेत्रीय केवीके, बीएयू सबौर और आईसीएआर-आईआईआर के साथ नियमित संवाद व प्रशिक्षणों के माध्यम से अपनी विधियों को वैज्ञानिक मान्यता दिलाई और किसानों के बीच व्यापक स्वीकार्यता सुनिश्चित की। संजीव कुमार का किसान-सशक्तिकरण मॉडल भी उतना ही उल्लेखनीय है। वे प्रति वर्ष लगभग एक लाख किसानों को प्रशिक्षण देते हैं और अपने डिजिटल मंच *अन्नदाता किसान क्लब* के माध्यम से लाखों किसानों को तकनीकी मार्गदर्शन, बीज उपलब्धता और बाजार-सम्बद्ध जानकारी प्रदान करते हैं। उनके कार्य से वैशाली तथा आसपास के जिलों में मिट्टी स्वास्थ्य सुधार, इनपुट लागत में कमी, स्थानीय बीज आत्मनिर्भरता और युवा किसानों के बीच कृषि-उद्यमिता के नए अवसर उत्पन्न हुए हैं। उनके नवाचारों को राष्ट्रीय स्तर पर अनेक सम्मान प्राप्त हुए हैं, जो किसान-नेतृत्व वाली नवाचार क्षमता के सशक्त उदाहरण हैं।

3. श्री ईश्वर दयाल (संभली, करनाल जिला, हरियाणा): इन-सिटू फसल अवशेष प्रबंधन और यंत्रीकरण नवाचार

श्री ईश्वर दयाल हरियाणा के करनाल जिले के अनुभवी और प्रगतिशील किसान हैं, जिन्होंने पराली जलाने जैसी गंभीर कृषि-पर्यावरणीय समस्या का स्थानीय, तकनीकी और व्यवहार्य समाधान प्रस्तुत किया। उन्होंने पारंपरिक संयुक्त कटाई मशीन को संशोधित कर “सुपर-एसएमएस संयुक्त” विकसित की, जो पराली को बारीक काटकर खेत में समान रूप से फैलाती है ताकि अवशेष जलाए बिना मिट्टी में समाहित किए जा सकें। इस नवाचार के साथ उन्होंने तीन-पंक्ति स्थानिक जीरो-टिल ड्रिल भी तैयार की, जो भारी अवशेषों की उपस्थिति में भी बीज बुवाई को सरल और प्रभावी बनाती है। ईश्वर दयाल का मॉडल मिट्टी में जैविक पदार्थ की मात्रा बढ़ाता है, सतही आर्द्रता को संरक्षित रखता है, सूक्ष्मजीव आबादी को सक्रिय करता है और दीर्घकाल में मिट्टी की उर्वरता को पुनर्स्थापित करता है। इससे किसानों को 30-40% तक श्रम और ईंधन की बचत होती है, जबकि पराली जलाने से होने वाले वायु प्रदूषण और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में उल्लेखनीय कमी आती है। CIMMYT, CSISA तथा ICAR-IAARI जैसे संस्थानों ने उनके मॉडल की तकनीकी वैधता और पर्यावरणीय लाभों की पुष्टि की है। उनकी विकसित मशीनें आसपास के जिलों में भी अपनाई गई हैं, जिससे सैकड़ों एकड़ क्षेत्र पराली-रहित बन चुका है। ईश्वर दयाल का कार्य यह प्रदर्शित करता है कि यंत्रीकरण-आधारित किसान नवाचार न केवल पर्यावरणीय संकटों का समाधान प्रदान करते हैं बल्कि दीर्घकालीन मिट्टी-स्वास्थ्य सुधार और संसाधन-दक्षता के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

4. श्री रविचंद्रन वंचिनाथन (नल्लमंगुड़ी, तिरुवारूर जिला, तमिलनाडु): पारदर्शिता, भंडारण सुरक्षा और दक्ष बुवाई प्रणाली का एकीकृत मॉडल

श्री रविचंद्रन वंचिनाथन, चार दशकों से अधिक के अनुभव वाले एक प्रगतिशील धान उत्पादक, तिरुवारूर के कृषि-जलवायु संदर्भ में तीन महत्वपूर्ण तकनीकी नवाचारों के विकास के लिए जाने जाते हैं, जिनका उद्देश्य उत्पादन, भंडारण और विपणन में दक्षता, पारदर्शिता और स्थिरता सुनिश्चित करना है। उनका पहला नवाचार स्मार्ट वेटमेंट एंड मॉनिटरिंग सिस्टम (SWAMS) है, जो तौल प्रक्रिया को डिजिटल रूप से दर्ज करके खरीद-बिक्री में पारदर्शिता स्थापित करता है। यह प्रणाली छोटे किसानों में विश्वास पैदा करती है तथा बाजार में होने वाली संभावित हेराफेरी को कम करती है। दूसरा महत्वपूर्ण नवाचार वैक्यूम-आधारित भंडारण प्रणाली है, जिसमें बिना किसी रासायनिक उपचार के अनाज को कम-ऑक्सीजन वातावरण में संरक्षित किया जाता है, जिससे फफूंद, कीट और पोषक-हानि न्यूनतम रहती है और किसान मूल्य में 15-20 प्रतिशत तक अतिरिक्त लाभ प्राप्त करते हैं। उनका तीसरा नवाचार सुदृढ़ सीधी बुआई धान (DSR) मॉडल है, जिसमें उच्च-गुणवत्ता बीज, न्यूमैटिक ड्रिल तथा गहराई-नियंत्रित यूरिया बूकेट सम्मिलित हैं, जो श्रम बचत, जल संरक्षण और पोषक-दक्षता को बढ़ाते हैं। आईसीएआर-आईएआरआई और TNAU के साथ निरंतर सम्पर्क ने उनके मॉडल की वैज्ञानिक पुष्टि की है। वे स्वयं बताते हैं कि पारदर्शिता और हानि-रहित भंडारण ने उनकी आय स्थिर की, जबकि DSR ने लागत घटाकर जोखिम कम किया तथा धान उत्पादन प्रणाली को अधिक लचीला और आधुनिक बनाया।

5. श्री सेठपाल सिंह (पद्म श्री), (नंदी, महारनपुर जिला, उत्तर प्रदेश): विविधीकृत, जैविक और जल-आधारित बहु-उद्यम मॉडल

पद्म श्री से सम्मानित श्री सेठपाल सिंह भारतीय कृषि में समग्र, वैज्ञानिक एवं जैविक दृष्टिकोण के प्रतिनिधि माने जाते हैं। नंदी गाँव में 12.4 हेक्टेयर क्षेत्र में उन्होंने फसल-बागवानी-जल-कृषि-पशुधन-मशरूम-मत्स्य-वन प्रणाली को एकीकृत करके ऐसा मॉडल विकसित किया है जो पर्यावरणीय स्थिरता, जोखिम-वितरण तथा वर्ष-भर आय के सिद्धांतों पर आधारित है। उनका नवाचार विशेष रूप से कमल और सिंघाड़ा आधारित जल-कृषि प्रणाली के कारण उल्लेखनीय है, जिसे उन्होंने क्षेत्रीय जलस्रोतों के अनुसार अनुकूलित किया। जैविक कृषि में वर्मीकम्पोस्ट, बायोफर्टिलाइजर और हरी खादों के उपयोग से उन्होंने मिट्टी की संरचना और कार्बन-सामग्री में उल्लेखनीय सुधार किया। उनके फसल चक्रण में मेथी और दलहनी फसलों को शामिल कर प्राकृतिक नाइट्रोजन स्थिरीकरण में बढ़ोतरी हुई, जिससे सिंथेटिक उर्वरकों की निर्भरता कम हुई। उनका बहु-आयामी मॉडल न केवल आर्थिक दृष्टि से अत्यंत स्थिर है, बल्कि समुदाय को उच्च-गुणवत्ता जैविक उत्पाद भी उपलब्ध कराता है। उनके खेत में प्रशिक्षित होकर सैकड़ों किसान

विविधीकृत मॉडल अपनाने लगे, जिससे क्षेत्रीय कृषि में जैव विविधता, बेहतर आय और उद्यमिता का विस्तार हुआ। 100 से अधिक राष्ट्रीय और राज्य-स्तरीय पुरस्कार उनके नवाचारों के सामाजिक, पारिस्थितिक और आर्थिक योगदान को प्रमाणित करते हैं।

6. श्री नरेंद्र सिंह सिपानी (मंदसौर, मध्य प्रदेश): किसानी-आधारित वैज्ञानिक नवाचार और सूक्ष्मपोषक-विकास का मॉडल

श्री नरेंद्र सिंह सिपानी, मंदसौर (मध्य प्रदेश) के एक प्रख्यात नवाचारी किसान हैं, जिन्होंने पाँच दशक से अधिक समय तक व्यवस्थित प्रयोगों और वैज्ञानिक संवाद के माध्यम से कृषक-नेतृत्व वाले अनुसंधान को रूप दिया। पाँच हेक्टेयर की सिंचित काली कपास मिट्टी पर संचालित उनका खेत विविध फसलों के लिए उन्नत किस्मों, सूक्ष्मपोषक मिश्रणों और पादप वृद्धि नियामकों (PGRs) के विकास का एक अनूठा क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र रहा है। प्रारंभिक वर्षों में हरित क्रांति के दौरान मेक्सिकन गेहूँ किस्मों के प्रसार में उनकी सक्रिय भूमिका तथा डॉ. एम. एस. स्वामिनाथन से प्रेरणा प्राप्त कर उन्होंने किसानों की आवश्यकताओं को केंद्र में रखते हुए स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप नवीन समाधान विकसित किए।

उनके द्वारा विकसित गेहूँ, सोयाबीन, मक्का, अरहर और अन्य फसलों की अनेक उन्नत किस्में जैसे मोहन वंडर, सोना शरबती, स्टार-2011 और शिवना, उच्च उत्पादकता, गुणवत्तापूर्ण दाना, अनुकूलन क्षमता तथा जलवायु सहनशीलता के लिए जानी जाती हैं। इसके साथ ही 70 से अधिक सूक्ष्मपोषक एवं PGR-आधारित फॉर्मूलेशन तथा आईएआरआई के साथ संयुक्त पेटेंट किया गया नैनो-कॉपर फॉर्मूलेशन उनके नवाचारों को वैज्ञानिक रूप से विशिष्ट बनाता है। IARI, NCL पुणे, ICRISAT और MPUAT जैसे संस्थानों द्वारा उनकी तकनीकों का परीक्षण व मान्यकरण किया गया है। उनकी किस्में वर्तमान में लाखों हेक्टेयर में उगाई जाती हैं, जिससे किसानों की आय 30-40% तक बढ़ी है और रासायनिक इनपुट पर निर्भरता कम हुई है। कई राष्ट्रीय पुरस्कार उनकी नवाचारी नेतृत्व क्षमता की पुष्टि करते हैं, जबकि भविष्य में वे अधिक जलवायु-सहिष्णु किस्मों तथा उन्नत नैनो-फॉर्मूलेशन विकसित करने का लक्ष्य रखते हैं।

7. श्री धरमपाल त्यागी (फरीदाबाद, हरियाणा): एकीकृत जैविक बहुफसली मॉडल और स्वदेशी बीज संरक्षण

श्री धरमपाल त्यागी, फरीदाबाद (हरियाणा) के एक अत्यंत प्रगतिशील किसान हैं, जिन्होंने पिछले तीन दशकों में जैविक खेती, बहुफसलीकरण और स्वदेशी बीज संरक्षण को मिलाकर एक अत्यंत प्रभावी एवं पुनरुत्पादक कृषि मॉडल विकसित किया है। सीमित औपचारिक शिक्षा के बावजूद उन्होंने खेत-स्तरीय प्रयोगों, परम्परागत ज्ञान और वैज्ञानिक सिद्धांतों के संयोजन से एक ऐसा एकीकृत मॉडल तैयार किया जो मिट्टी की उर्वरता बहाल करता है, रासायनिक इनपुट पर निर्भरता घटाता है, और किसानों

को टिकाऊ आय प्रदान करता है। उनका मॉडल 2015-2025 के दौरान विकसित हुआ और इसमें स्थानीय संसाधनों से तैयार जैविक घोल-जीवामृत, गोकुल अमृत, अग्नास्त्र, ब्रह्मास्त्र, दशपर्णी अर्क और नीम-आधारित कीटनाशक केंद्रीय भूमिका निभाते हैं, जिन्हें वे पूरी तरह खेत पर उपलब्ध सामग्रियों से तैयार करते हैं। उनकी खेती पद्धति में बहुफसलीकरण, ट्रेप एवं बाईर क्रॉपिंग, हरी खाद, जैव उर्वरक, ब्लू-ग्रीन एल्गी, राइजोबियम और पीएसबी का प्रयोग शामिल है, जिसने मिट्टी के कार्बन स्तर और जल धारण क्षमता में उल्लेखनीय सुधार किया है। वे पूसा बासमती 1121 में अनुकूलित दूरी, गेहूं में कम बीज दर, और सब्जियों में फल आकार प्रबंधन जैसी प्रायोगिक तकनीकों को लगातार परिष्कृत करते रहते हैं। उनका मॉडल अत्यंत कम लागत वाला है और छोटे किसानों के लिए आसानी से अपनाने योग्य साबित हुआ है।

उनके नवाचारों का प्रसार हरियाणा, उत्तर प्रदेश और पंजाब के लगभग 1700 हेक्टेयर क्षेत्र में हुआ है और प्रतिवर्ष 1000 से अधिक किसान उनके प्रशिक्षण में भाग लेते हैं। अंतरराष्ट्रीय संस्थानों तथा ICAR-IARI द्वारा प्रशंसा ने उनके कार्य को वैज्ञानिक मान्यता प्रदान की है। आर्थिक रूप से उनकी पद्धतियों ने धनिया, फूलगोभी, टमाटर, गेहूं और धान में लाभ-लागत अनुपात को उल्लेखनीय रूप से बढ़ाया है, जबकि सामाजिक रूप से वे किसानों को आत्मनिर्भर जैविक इनपुट उत्पादन की ओर प्रेरित करते हैं। पर्यावरणीय दृष्टि से उनका मॉडल मिट्टी के स्वास्थ्य, जैव विविधता और जलवायु लचीलापन बढ़ाने वाला सिद्ध हुआ है।

8. श्री आजाराम वर्मा (खरका देवरी, बस्ती जिला, उत्तर प्रदेश) – किसान-नेतृत्व वाली किस्म विकास और लघु-धारित कृषि हेतु यंत्रीकरण के प्रणेता

श्री आजाराम वर्मा, बस्ती जिला (उत्तर प्रदेश) के एक प्रगतिशील कृषक, पिछले पचीस वर्षों से स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप किस्म सुधार, बीज चयन और लघु-धारित खेतों के लिए यंत्रीकरण नवाचारों पर कार्य कर रहे हैं। माध्यमिक शिक्षा प्राप्त होने के बावजूद, उनका कृषि-ज्ञान व्यापक क्षेत्रीय अनुभव, निरंतर प्रयोग और केवीके-विश्वविद्यालयों के साथ गहरे संवाद पर आधारित है। उन्होंने पाँच हेक्टेयर सिंचित भूमि पर मिश्रित खेती प्रणाली विकसित की है, जिसमें फसलें, सब्जियाँ, फल एवं पशुपालन एकीकृत रूप से संचालित होते हैं। उनके प्रमुख नवाचारों में AR-64 गेहूं चयन, कैप्टन बस्ती गन्ना चयन तथा काला नमक धान की 101, 102 और किरण जैसी उन्नत शैलियाँ शामिल हैं, जिनकी उत्पादकता, रोग-सहिष्णुता, दाने की गुणवत्ता और सुगंध स्थानीय किसानों के लिए उच्च मूल्य प्रदान करती है।

उनकी एक महत्वपूर्ण उपलब्धि छोटे खेतों के लिए ट्रैक्टर-संचालित मिनी-कॉम्बाइन हार्वेस्टर का विकास है, जिसने कटाई-शेथिंग को सरल किया, श्रम लागत घटाई और अवशेष प्रबंधन में

सुधार दिया। केवीके, राज्य कृषि विभाग, कृषि विश्वविद्यालयों तथा नेशनल इनोवेशन फ़ाउंडेशन के साथ संस्थागत संपर्कों ने उनकी किस्मों और मशीन के क्षेत्रीय सत्यापन को मजबूती प्रदान की। किसानों में प्रारंभिक संदेह, सीमित संसाधन और मशीन अनुकूलन की चुनौतियों को उन्होंने सतत प्रदर्शन, शुद्ध बीज उत्पादन और विशेषज्ञ मार्गदर्शन के माध्यम से दूर किया। उनके नवाचारों को हजारों किसान अपना चुके हैं, जिससे क्षेत्र में उपज वृद्धि, लागत में कमी, पर्यावरणीय लाभ और स्थानीय बीज-यंत्रीकरण आत्मनिर्भरता सुदृढ़ हुई है।

9. श्री जगपाल सिंह (मलिकपुर, झज्जर जिला, हरियाणा): मधुमक्खी-आधारित विविधीकृत उद्यमिता मॉडल

मलिकपुर, झज्जर, हरियाणा के प्रगतिशील मधुमक्खीपालक श्री जगपाल सिंह लगभग पच्चीस वर्षों से मधुमक्खी-आधारित उद्यमिता का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। 1,500 *Apis mellifera* कालोनियों का संचालन उनके कौशल, तकनीकी दक्षता और बड़े पैमाने पर प्रबंधकीय क्षमता को दर्शाता है। पारंपरिक शहद उत्पादन के विपरीत, उन्होंने छत्तों से प्राप्त होने वाले सभी उप-उत्पादों—बी पॉलन, रॉयल जेली, बी वैक्स—को मूल्यवर्धित उत्पादों में बदलकर एक अत्यंत अभिनव मॉडल विकसित किया है। वैज्ञानिक प्रसंस्करण तकनीकों जैसे नियंत्रित ताप पर पॉलन सुखाना, छत्तों से 72 घंटे के भीतर रॉयल जेली निष्कर्षण, तथा शुद्ध बी वैक्स को प्राकृतिक अवयवों के साथ मिश्रित कर त्वचा-हितैषी मॉड्युलेशन तैयार करना उनके उद्यम के प्रमुख तकनीकी स्तंभ हैं।

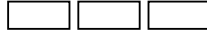
वर्ष 2021 के बाद विकसित यह विविधीकृत मूल्य-वर्धन मॉडल न केवल मधुमक्खीपालकों के लिए नए आर्थिक अवसर खोलता है बल्कि शहद पर निर्भरता कम कर स्थिर आय सुनिश्चित करता है। उनकी पहल को हरियाणा, राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश और जम्मू-कश्मीर के हजारों उपभोक्ताओं और लगभग सोलह सौ किसानों द्वारा स्वीकार किया गया है, जिससे यह सिद्ध होता है कि मधुमक्खी-आधारित विविधीकृत उत्पाद ग्रामीण उद्यमिता के लिए अत्यंत व्यवहार्य विकल्प प्रस्तुत करते हैं। उनके प्रयासों ने ग्रामीण युवाओं के लिए रोजगार के अवसर बढ़ाए, रासायनिक-मुक्त उत्पादों की उपलब्धता में वृद्धि की, तथा जैव-विविधता और परागण सेवाओं को मजबूत किया। वर्ष 2023-24 में ₹1.89 करोड़ और 2024-25 में ₹2.1 करोड़ के कारोबार के साथ उनका उद्यम राष्ट्रीय स्तर पर एक सफल मॉडल के रूप में स्थापित हुआ है। अनेक राष्ट्रीय सम्मानों जिनमें पूसा संस्थान का फेलो किसान पुरस्कार, हरियाणा कृषि रत्न, और कृषि नेतृत्व पुरस्कार शामिल हैं, ने उनके नवाचारी योगदान को व्यापक मान्यता प्रदान की है।

निष्कर्ष

किसान-नेतृत्व वाली कृषि नवाचार की यह विस्तृत समीक्षा दर्शाती है कि भारत के ग्रामीण परिदृश्य में परिवर्तन की सर्वाधिक

सक्षम शक्ति स्वयं किसान समुदाय है। प्रस्तुत मामलों से यह स्पष्ट होता है कि विविध भौगोलिक, पारिस्थितिक और सामाजिक परिस्थितियों में किसान अपनी आवश्यकताओं, संसाधनों और चुनौतियों के अनुसार स्वतः नवाचार विकसित करते हैं चाहे वह बीज सुधार हो, मृदा-पुनर्जनन, जल-प्रबंधन, यंत्रीकरण, एकीकृत खेती, मूल्य-वर्धन, या संरक्षण कृषि। इन नवाचारों ने न केवल उत्पादन-क्षमता, गुणवत्ता और लाभप्रदता में वृद्धि की है, बल्कि कृषि को अधिक टिकाऊ, पर्यावरण-संवेदी और जलवायु-लचीला बनाया है। वैज्ञानिक संस्थानों, केवीके, एफपीओ और राज्य कृषि

विभागों के सहयोग ने इन नवाचारों को वैधता, विस्तार और संरचनात्मक समर्थन प्रदान किया है, जिससे वे व्यक्तिगत समाधानों से सामुदायिक मॉडलों में परिवर्तित हो सके। इस प्रकार, किसान-नेतृत्व वाले नवाचार भारत की कृषि अर्थव्यवस्था के लिए केवल विकल्प नहीं, बल्कि भविष्य की अनिवार्य दिशा हैं। इन सफलताओं से प्रेरणा लेकर यदि नीतियाँ, संस्थान और बाज़ार ढाँचे किसानों की पहल को पहचानें और मजबूत करें, तो भारत एक अधिक समृद्ध, आत्मनिर्भर, सतत और समावेशी कृषि प्रणाली की ओर तीव्र गति से अग्रसर हो सकेगा।



किसान-नेतृत्व वाले कृषि नवाचार में महिलाओं का सशक्तिकरण

प्रतिभा जोशी, पुनीता पी, शुभाश्री साहू, मिषा माधवन, सीमा सांगवान एवं गीतांजलि जोशी

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

परिचय: भारतीय कृषि में महिलाओं का केंद्रीय स्थान

भारतीय कृषि, जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था की आधारभूत संरचना का निर्माण करती है, लगभग 90 करोड़ लोगों को आजीविका प्रदान करती है और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा एवं सकल घरेलू उत्पाद में महत्वपूर्ण योगदान देती है। इस विशाल कार्यबल में महिलाएँ लगभग एक-तिहाई प्रतिनिधित्व रखती हैं और रोपाई, खरपतवार नियंत्रण, कटाई, बीज संरक्षण तथा पशु-फसल प्रबंधन जैसे अधिकाधिक श्रम-प्रधान कार्यों में अग्रणी भूमिका निभाती हैं। इसके बावजूद महिलाएँ भूमि स्वामित्व, ऋण सुविधाओं, कृषि विस्तार सेवाओं, बाजार पहुँच, तकनीकी प्रशिक्षण, तथा निर्णयकारी संस्थानों में प्रतिनिधित्व के संदर्भ में संरचनात्मक बहिष्करण का सामना करती हैं। इन विषमताओं के कारण उनके नवाचार योगदान अक्सर अदृश्य रह जाते हैं, जबकि उनके पास पारंपरिक पारिस्थितिक ज्ञान, संसाधन प्रबंधन क्षमता और घरेलू स्थिरता बनाए रखने का व्यापक अनुभव निहित है। किसान-नेतृत्व वाले नवाचार प्रणाली में लिंग-संवेदनशील दृष्टिकोण इस ज्ञान और क्षमता को दृश्यमान बनाने और सतत कृषि परिवर्तन सुनिश्चित करने के लिए अनिवार्य है।

किसान-नेतृत्व वाले नवाचार का महत्व

किसान-नेतृत्व वाले नवाचार पारंपरिक शीर्ष-से-नीचे प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के विपरीत, स्थानीय संदर्भों और अनुभवों पर आधारित, समुदाय-उत्पन्न समाधान प्रस्तुत करता है। यह नवाचार प्रथाओं, औजारों एवं उत्पादन-वृद्धि रणनीतियों से लेकर मूल्य संवर्धन तकनीकों तक विस्तृत है और किसानों के अवलोकन तथा अनौपचारिक प्रयोगों से उत्पन्न होते हैं। इन नवाचारों की प्रमुख विशेषता यह है कि वे स्थानीय मिट्टी, जल उपलब्धता, जलवायु परिवर्तनशीलता, तथा सामाजिक-सांस्कृतिक अनुकूलन क्षमता के साथ सुसंगत रहते हैं। इसके अतिरिक्त, ये लागत-प्रभावी, संसाधन-संरक्षणवादी और लचीलापन-वर्धित समाधान प्रदान करते हैं। किसान-से-किसान सीखने, प्रदर्शनों तथा अनौपचारिक ज्ञान-साझाकरण से इनके अपनाने की गति तीव्र होती है, जिससे सामुदायिक सहृदयता जीवन्त रहती है। चूँकि ये नवाचार जैव विविधता, मिट्टी की उर्वरता और जलवायु अनुकूलन क्षमता को सुदृढ़ करते हैं, अतः इन्हें केवल तकनीकी समाधान नहीं बल्कि सामाजिक और पारिस्थितिक रूप से अंतर्निहित रणनीति माना जा सकता है।

लिंग दृष्टिकोण क्यों आवश्यक है

महिलाओं के पास कृषि प्रणालियों में गहन अनुभवजन्य ज्ञान होने के बावजूद, कई व्यवस्थागत अवरोध उनके नवाचार योगदान को अदृश्य बनाए रखते हैं। भूमि एवं उत्पादक संसाधनों का सीमित स्वामित्व उनकी प्रयोग करने और निवेश बढ़ाने की क्षमता को प्रभावित करता है। प्रशिक्षण एवं विस्तार सेवाओं तक पहुँच में लिंग असमानता, समय और गतिशीलता की बाधाएँ, तथा पुरुष-प्रधान संस्थागत संरचनाएँ महिलाओं के सीखने और नवाचार क्षमता को सीमित करती हैं। महिलाओं द्वारा किया गया पारिस्थितिक ज्ञान, पोषण-केंद्रित उत्पादन, बीज संरक्षण तथा श्रम-न्यूनीकरण रणनीतियों जैसे नवाचार प्रायः औपचारिक अनुसंधान प्रणाली में दस्तावेजीकृत नहीं होते। इस प्रकार लिंग-संवेदनशील दृष्टिकोण न केवल न्यायसंगत है बल्कि कृषि प्रणाली को अधिक उत्पादक, लचीला और विविधतापूर्ण बनाने के लिए भी आवश्यक है।

कृषि नवाचार प्रणालियों में महिलाओं की भूमिकाएँ

महिलाओं की दैनिक कृषि सहभागिता उन्हें नवाचार के लिए विशिष्ट क्षमताएँ प्रदान करती है। वे स्वाद, सहनशीलता, भंडारण योग्यता और कीट प्रतिरोध जैसे मापदंडों पर बीज संरक्षण और विविधता प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वे कटाई-उत्तर प्रबंधन में कम लागत वाले सुखाने, प्रसंस्करण, संरक्षण और पोषण-वर्धक तकनीकों का विकास करती हैं, जिससे घरेलू और बाजार-उन्मुख मूल्य संवर्धन को बल मिलता है। जैविक खाद निर्माण, वनस्पति-आधारित कीटनाशक, रसोई उद्यान प्रबंधन और जल-बचत अभ्यास महिलाओं के पारिस्थितिक ज्ञान का विस्तार प्रस्तुत करते हैं। जलवायु परिवर्तनशीलता के संदर्भ में मिश्रित फसलों, लचीली बुआई रणनीतियों और आजीविका विविधीकरण के माध्यम से वे समुदाय-स्तरीय अनुकूलन क्षमता को मजबूत करती हैं। इन सबके बावजूद सामाजिक मान्यताएँ अक्सर उनके ज्ञान को कमतर आँकती हैं, जिससे औपचारिक नवाचार प्रणाली में उनका योगदान पर्याप्त रूप से सम्मिलित नहीं हो पाता।

महिलाओं की सहभागिता में प्रमुख बाधाएँ

महिलाएँ नवाचार नेतृत्व के लिए अनेक बहुस्तरीय बाधाओं का सामना करती हैं। संस्थागत स्तर पर भूमि एवं संसाधनों पर सीमित अधिकार, पुरुष-केंद्रित विस्तार प्रणाली, तथा सहकारिताओं व किसान संगठनों में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व उनकी सहभागिता को

बाधित करता है। सामाजिक-सांस्कृतिक मान्यताएँ गतिशीलता, निर्णय लेने की क्षमता तथा सार्वजनिक मंचों में उपस्थित होने की स्वतंत्रता को सीमित करती हैं। आर्थिक बाधाओं में ऋण, इनपुट और बाजारों तक अपर्याप्त पहुँच प्रमुख हैं, जिससे सफल नवाचारों का विस्तार सीमित हो जाता है। महिलाओं के नवाचारों का औपचारिक दस्तावेजीकरण भी न्यून है, जिससे उन्हें पुरस्कार, पेटेंट या बौद्धिक संपदा संरक्षण के अवसर नहीं मिल पाते। इन बाधाओं को दूर करने के लिए समुदाय, संस्थानों और नीति-स्तर पर व्यापक परिवर्तन आवश्यक है।

नवाचार में महिलाओं के सशक्तिकरण का बहुआयामी ढाँचा

महिलाओं के सशक्तिकरण का ढाँचा आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, संज्ञानात्मक और कल्याण संबंधी आयामों पर आधारित है। आर्थिक आयाम में भूमि, ऋण, संपत्ति व बाजार तक पहुँच और मूल्य श्रृंखलाओं में समान भागीदारी आवश्यक है। सामाजिक आयाम में किसान समूहों, SHG और सहकारिताओं के माध्यम से सामूहिकता, मार्गदर्शन और विशेषज्ञता की पहचान को सुदृढ़ किया जाता है। राजनीतिक सशक्तिकरण स्थानीय शासन, एफ पी ओ बोर्डों और संसाधन प्रबंधन संस्थाओं में महिला प्रतिनिधित्व को प्राथमिकता देता है। संज्ञानात्मक सशक्तिकरण तकनीकी कौशल, डिजिटल साक्षरता, वित्तीय प्रबंधन और दस्तावेजीकरण क्षमताओं के विकास पर केंद्रित है। कल्याण आयाम श्रम-न्यूनीकरण तकनीकों, पोषण, स्वास्थ्य, बाल-देखभाल और सुरक्षित गतिशीलता पर आधारित है।

महिलाओं की नवाचार प्रणालियों को मजबूत करने की रणनीतियाँ

लिंग-समावेशी नवाचार पारिस्थितिकी तंत्र विकसित करने के लिए संस्थागत, समुदाय और व्यक्तिगत स्तरों पर समन्वित रणनीतियाँ आवश्यक हैं। संस्थागत स्तर पर महिलाओं के संसाधन अधिकार सुनिश्चित करना, महिला विस्तार कर्मियों की तैनाती, तथा महिलाओं के नवाचारों के प्रमाणन और दस्तावेजीकरण के लिए संरचनाएँ विकसित करना महत्वपूर्ण है। समुदाय स्तर पर महिला-नेतृत्व वाले किसान समूह, SHG-FPO अभिसरण, तथा साझा अवसंरचना स्थापित करना प्रभावी उपाय हैं। व्यक्तिगत स्तर पर तकनीकी प्रशिक्षण, डिजिटल कौशल, उद्यमिता विकास और मार्गदर्शन कार्यक्रम महिलाओं को नवाचार नेतृत्व की दिशा में सशक्त बनाते हैं।

लिंग-संवेदनशील किसान-नेतृत्व वाले नवाचार के लिए नीतिगत दिशाएँ

नीतिगत रूपरेखा में महिलाओं के नवाचारों की राष्ट्रीय-राज्य स्तरीय रजिस्ट्री तैयार करना, पुरस्कार एवं नवाचार कोष स्थापित करना, तथा विस्तार कार्यक्रमों में महिलाओं की अनिवार्य सहभागिता शामिल होनी चाहिए। वित्तीय समावेशन हेतु सरलित ऋण प्रणाली, समूह ऋण, और महिला-नेतृत्व वाले एफ पी ओ उत्पादों की सरकारी खरीद को बढ़ावा देना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, शासन

प्रशिक्षण, उद्यम विकास और व्यवसाय ऊष्मायन केंद्र महिलाओं के नेतृत्व को सुदृढ़ कर सकते हैं। अगले खंड में हम महिला किसानों के चयनित सफल नवाचार उदाहरण प्रस्तुत करेंगे, जो इस विश्लेषण को अनुभवजन्य आधार देंगे और किसान-नेतृत्व वाली नवाचार प्रणाली में महिलाओं की वास्तविक भूमिका को उजागर करेंगे।

श्रीमती साधना तिवारी - एकीकृत विविधीकृत खेती नवाचारी (मध्य प्रदेश)

श्रीमती साधना तिवारी (आयु 39 वर्ष) मध्य प्रदेश के सतना जिले की एक प्रगतिशील एवं नवाचारी महिला किसान हैं, जिन्हें फसल विविधीकरण तथा एकीकृत खेती में तेरह वर्षों का अनुभव है। लगभग 7.5 हेक्टेयर भूमि (जिसमें 5.5 हेक्टेयर पट्टे पर) का प्रबंधन करते हुए उन्होंने बकरी पालन, डेयरी प्रबंधन, मछली उत्पादन, मशरूम उत्पादन, गोबर खरीद केंद्र, दूध संग्रह संचालन, स्वदेशी गाय नस्ल संरक्षण तथा मूल्य संवर्धन एवं प्रसंस्करण जैसी कई घटकों वाली मल्टी-एंटरप्राइज खेती मॉडल विकसित किया है। उनकी नवाचार यात्रा KVK सतना के मार्गदर्शन में शुरू हुई और 2022 में प्राप्त IARI इनोवेटिव फार्मर अवॉर्ड के बाद अत्यधिक विस्तारित हुई। इसके पश्चात उन्होंने प्राकृतिक खेती तकनीकें, पूसा डीकम्पोजर, अतिरिक्त पशुधन इकाइयाँ तथा उद्यम-आधारित गतिविधियाँ अपनाईं जिससे फार्म लाभप्रदता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। उन्होंने गाय-आधारित जैविक इनपुट, बीज उत्पादन, धान भूसा संग्रह एवं मूल्य संवर्धन, सूक्ष्म सिंचाई, मशरूम उत्पादन, बकरी पालन एवं बकरी बैंक मॉडल, गोबर खरीद एवं दूध संग्रह केंद्र तथा संरचित सब्जी उत्पादन जैसे कई तकनीकी घटक सफलतापूर्वक एकीकृत किए हैं। उनका कार्य एन डी डी एस एस, के वी के सतना, जे एन के वी वी जबलपुर, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थान तथा राज्य विभागों के सहयोग से मजबूत हुआ। सोहावल एफ पी ओ के प्रबंधन एवं सदस्यों के समन्वय जैसी चुनौतियों का समाधान उन्होंने संरचित समूह संलग्नता एवं उद्यम मजबूती से किया। उनकी पहलों से मल्टी-एंटरप्राइज एकीकरण एवं बीज उत्पादन गतिविधियों के माध्यम से उनकी तथा आसपास के किसानों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। उन्होंने चालीस गाँवों में एफ पी ओ सदस्यता को 3,167 किसानों तक विस्तारित किया तथा 673 महिलाओं को मूल्य संवर्धन एवं प्रसंस्करण में प्रशिक्षित किया। उनके योगदान से डेयरी, गौशाला एवं प्रसंस्करण गतिविधियों के माध्यम से बैतालीस आदिवासी परिवारों की आजीविका में सुधार हुआ तथा "ड्रोन दीदी" के रूप में उन्होंने युवाओं एवं महिलाओं को प्रेरित किया। उन्हें कृषक फेलो अवॉर्ड (RVSUAT 2003; JNAU 2022), सुशमा स्वराज अवॉर्ड (2023), पूसा संस्थान द्वारा नवोनमेषी कृषक पुरस्कार (2022) एवं फेलो फार्मर अवॉर्ड (2024) जैसी प्रमुख मान्यताएँ प्राप्त हुई हैं। उनका भविष्य दृष्टिकोण वैज्ञानिक एवं विस्तार प्रणालियों के सहयोग से किसानों, महिलाओं और युवाओं में विविधीकृत खेती मॉडलों का विस्तार कर ग्रामीण आजीविका सुरक्षा बढ़ाना है।

श्रीमती पूजा शर्मा - बाजरा आधारित कृषि उद्यम एवं महिला सशक्तिकरण नेत्री (हरियाणा)

1979 में हरियाणा के गुरुग्राम में जन्मी श्रीमती पूजा शर्मा एक अग्रणी महिला उद्यमी हैं, जो Zing-N-Zest तथा बाद में 'मिलेट मॉम' ब्रांड के तहत बाजरा आधारित खाद्य प्रसंस्करण उद्यम संचालित करती हैं। कृषि भूमि होने के बावजूद वे दो एकड़ पट्टे पर ली गई भूमि पर खेती करती हैं और 6,534 वर्ग फुट प्रसंस्करण अवसंरचना का प्रबंधन करती हैं। 2013 से "क्षितिज" स्वयं सहायता समूह की अध्यक्ष के रूप में उन्होंने समूह को महिला-नेतृत्व वाले कृषि-पोषण उद्यम में परिवर्तित किया, जो ग्लूटेन-मुक्त, वेगन एवं बाजरा आधारित उत्पादों के माध्यम से कुपोषण कमी, स्वस्थ भोजन पहुँच और महिला आर्थिक सशक्तिकरण को बढ़ावा देता है। उन्होंने ज्वार, बाजरा, रागी, जौ, जई और बेसन से चालीस से अधिक उत्पाद विकसित किए, जिसमें रिफाइंड शुगर के स्थान पर गुड़, देशी खांड, अलसी और अजवाइन का उपयोग किया गया। उनकी प्रमुख उपलब्धि फीडिंग इंडिया मिशन के लिए नौ लाख न्यूट्रिशन लड्डुओं का उत्पादन है। के वी के शिकोहपुर (आर्या प्रोजेक्ट), डी आर डी ए गुरुग्राम, एच एस आर एल एम , तथा रुडसेट जैसी संस्थाओं के सहयोग ने उन्हें तकनीकी, उद्यमी और ब्रांडिंग कौशल विकसित करने में सहायता की, जिससे उनके उत्पाद अन्नमय एयरोसिटी, रिलायंस स्टोर, लामर्श, हाफेड प्लेटफॉर्म और 24x7 स्टोर जैसे संगठित खुदरा बाजारों तक पहुँचे। प्रसंस्करण तकनीक, पैकेजिंग, मशीनरी तथा गुणवत्ता नियंत्रण संबंधी प्रारंभिक चुनौतियों को उन्होंने संस्थागत साझेदारों के माध्यम से क्षमता निर्माण और तकनीकी सुधार द्वारा दूर किया और एक प्राइवेट लिमिटेड कंपनी दर्ज कराई। उनके उत्पाद पोषण पहुँच को बढ़ाते हैं, जलवायु-लचीले बाजरा को बढ़ावा देते हैं और चौबीस महिलाओं को रोजगार प्रदान करते हैं। उनका विस्तार हरियाणा, दिल्ली, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के माध्यम से नियत चैनलों तक पहुँचा है, जबकि उन्होंने 100 से अधिक महिलाओं को प्रशिक्षित किया और 2,500 किसानों एवं युवाओं को प्रेरित किया। उनका कार्य विभिन्न मेलों सूरजकुंड मेला, पूसा कृषि मेला, सरस मेला, प्रगति मैदान ट्रेड फेयर में प्रदर्शित होता रहा है। उनकी आर्थिक यात्रा 2016-17 में ₹5.15 लाख से 2024-25 में ₹40.30 लाख तक टर्नओवर वृद्धि दर्शाती है। उन्हें नारी शक्ति पुरस्कार (2022), पूसा संस्थान द्वारा नवोनमेषी किसान पुरस्कार (2016), पंडित दीनदयाल उपाध्याय अंत्योदय कृषि पुरस्कार (2015), एवं पूसा संस्थान द्वारा फेलो किसान पुरस्कार (2024) प्राप्त हुए हैं, तथा उन्हें दूरदर्शन किसान, ग्रीन टीवी और अन्य मीडिया प्लेटफॉर्मों पर व्यापक कवरेज मिला है। उनका भविष्य लक्ष्य मिलेट मॉम ब्रांड को राष्ट्रीय एवं वैश्विक स्तर पर विस्तारित करना, बड़े पैमाने की प्रसंस्करण सुविधाएँ स्थापित करना, उन्नत तकनीकों को अपनाना और उद्यम-आधारित मूल्य श्रृंखला विकास के माध्यम से अधिक महिलाओं को सशक्त करना है।

श्रीमती बिनिता कुमारी - कम लागत धान-अनाज स्पॉन नवाचारी (बिहार)

श्रीमती बिनिता कुमारी (आयु 36 वर्ष) बिहार के बांका जिले की एक अग्रणी महिला कृषि उद्यमी हैं, जो कम लागत एवं स्थानीय स्तर पर विस्तार योग्य धान-अनाज आधारित मशरूम स्पॉन प्रौद्योगिकी विकसित करने के लिए जानी जाती हैं। तेरह वर्षों के अनुभव के साथ वे अपने तीन बीघा घरेलू स्थान पर सुव्यवस्थित स्पॉन उत्पादन इकाई संचालित करती हैं, जिसमें ऑयस्टर, बटन तथा मिल्की मशरूम प्रणालियाँ एकीकृत हैं। उनका नवाचार गेहूँ की जगह धान का उपयोग कर स्पॉन उत्पादन करता है—यह विधि 2021-22 में विकसित हुई, जो लागत कम करती है, कमरे के तापमान पर एक-दो महीने शेल्फ लाइफ बढ़ाती है तथा एक किलोग्राम धान से सात स्पॉन पैकेट तैयार करके उत्पादन दक्षता बढ़ाती है, जबकि गेहूँ से पाँच पैकेट मिलते हैं। तकनीकी प्रक्रिया में सफाई, उबालना, pH समायोजन, ऑटोक्लेव निष्फलन, लैमिनार फ्लो इम्यूनाइजेशन तथा ऊष्मायन शामिल हैं, जिन्हें के वी के बांका के मार्गदर्शन में कई परीक्षणों एवं दूषण मूल्यांकन के बाद मानकीकृत किया गया। संस्थागत साझेदारों ने प्रदर्शन, भंडारण स्थिरता तथा सूक्ष्मजीवी गुणवत्ता की पुष्टि की, और उनकी इकाई आत्मा कार्यक्रमों, किसान प्रशिक्षणों तथा युवा कार्यशालाओं में प्रदर्शित हुई। प्रारंभिक चुनौतियाँ—दूषण, नमी परिवर्तनशीलता, उपकरण सीमाएँ, अनियमित बिजली और किसान संकोच—को उन्होंने कठोर निष्फलन प्रोटोकॉल, हिंदी एस ओ पी निर्माण, प्रदर्शन तथा KVK वैज्ञानिकों के साथ संयुक्त समस्या-निवारण द्वारा हल किया। किसानों के लिए यह नवाचार अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ: कम कच्चा माल लागत, कम शीत भंडारण आवश्यकता, विश्वसनीय भंडारण अवधि, स्थानीय उपलब्धता और स्थिर उत्पादन विशेष रूप से महिला-नेतृत्व वाले सूक्ष्म उद्यमों के लिए। वे 11,000 से अधिक किसानों तथा विभिन्न संस्थानों को स्पॉन आपूर्ति करती हैं और लगभग 1,250 व्यक्तियों, स्वयं सहायता समूह सदस्य तथा युवाओं सहित अनेकों को प्रशिक्षण दे चुकी हैं, जिससे क्षेत्रीय मशरूम क्लस्टर विकसित हुआ है। आर्थिक रूप से उनकी इकाई स्पॉन एवं मशरूम बिक्री से सतत आय वृद्धि दर्शाती है, जबकि सामाजिक रूप से यह नवाचार महिलाओं की उद्यमिता को बढ़ावा देता और प्रवासन कम करता है। पर्यावरणीय रूप से यह धान अवशेषों के परिपत्र उपयोग को बढ़ाता है और जलाने की प्रवृत्ति कम करता है। उनका कार्य के वी के प्रमाणन, जिला सम्मान, पूसा संस्थान से नवोनमेषी कृषक पुरस्कार प्लेटफॉर्मों तथा प्रशिक्षण मैनुअल में शामिल होकर मान्यता प्राप्त कर चुका है। भविष्य में वे उच्च क्षमता वाले ऑटोक्लेव, उन्नत ऊष्मायन कक्ष, ऊर्जा कुशल तकनीक, सहकारी गठन, मूल्य-संवर्धित मशरूम प्रसंस्करण तथा प्रमाणन हेतु विश्वविद्यालय साझेदारी के माध्यम से क्षमता विस्तार की योजना रखती हैं, जिससे जलवायु-लचीली ग्रामीण आजीविकाओं का विस्तार हो सके।

श्रीमती मीना महंता – केओंझर, ओडिशा

श्रीमती मीना महंता, खुन्टापिंगु (ब्लॉक साहरपाड़ा), जिला केओंझर, ओडिशा की 2.7 हेक्टेयर भूमि पर पंद्रह वर्षों के अनुभव के साथ बहुविविध कृषि प्रणाली संचालित करने वाली एक अनुभवी कृषक हैं, जिनकी उद्यमिक गतिविधियों में फसल उत्पादन, सब्जी खेती, एग्रोफॉरेस्ट्री, डेयरी, पोल्ट्री, कबूतर पालन, बकरीपालन, मत्स्यपालन तथा मिनी पैडी हलर संचालन सम्मिलित हैं, और जिनका कृषि ढांचा सिंचाई संरचनाओं, स्प्रिंकलर प्रणाली, पम्प, पावर श्रेथर तथा पैडी हलर से सुसज्जित है, जिससे वैज्ञानिक एवं संसाधन-कुशल कृषि संभव होती है। उनके नवाचारों में संशोधित पॉलिथीन मल्लिचिंग तकनीक (जिसमें पौध रोपण फुरो में और मल्लिचिंग रिज पर कर सीधे सिंचाई रेखा को जल-प्रदाय हेतु सक्षम किया गया), खेत की तैयारी में स्वयं के खेत से प्राप्त सूखी नीम पत्तियों का जैव उर्वरक-किटाणुनाशक के रूप में समावेश, तथा कम लागत वाला कबूतर पालन मॉडल (मिट्टी के घड़ों और कम-लागत चारे का प्रयोग) सम्मिलित हैं, जिनका विकास भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की परियोजना के अंतर्गत वैज्ञानिक प्रशिक्षण, फील्ड प्रदर्शन और तकनीकी परामर्श से क्रमिक परिष्कार द्वारा हुआ। बाजार में मल्लिचिंग सामग्री की अनुपलब्धता, 2018-20 में बैंगन में कीट प्रकोप, कोरोना काल के दौरान इनपुट व बाजार सीमाएँ तथा प्रारंभिक वर्षों में सिंचाई की कमी जैसी चुनौतियों का समाधान उन्होंने उद्यम विविधीकरण, गैर-रासायनिक कीट प्रबंधन, बोरवेल-स्प्रिंकलर स्थापना और संस्थागत सहयोग के माध्यम से किया। इन नवाचारों से 20-25% जल-बचत, रसायनों पर निर्भरता में कमी, श्रम आवश्यकता घटने (निराई कार्य), लगभग ₹20,000 वार्षिक बचत, तथा मिट्टी एवं उपज गुणवत्ता में सुधार हुआ; साथ ही उनके प्रशिक्षणों, स्वयं सहायता समूह संवादों और कृषक-भ्रमणों के माध्यम से इन प्रौद्योगिकियों का प्रसार एक हजार से अधिक किसानों तक हुआ। आर्थिक रूप से उनकी शुद्ध आय 2015-16 के ₹1,65,000 से बढ़कर 2024-25 में लगभग ₹5,00,000 हो गई, जबकि सामाजिक एवं पर्यावरणीय स्तर पर उन्होंने जैविक प्रथाओं, जल-दक्षता, कीटनाशक उपयोग में कमी, जलवायु-लचीलापन और स्थानीय रोजगार सृजन को सुदृढ़ किया है, तथा उन्हें राष्ट्रीय एवं क्षेत्र विशेष पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है तथा उनका कार्य प्रकाशनों, समाचार माध्यमों में प्रकाशित हुआ है।

श्रीमती संतोष देवी खेदर – सीकर, राजस्थान

श्रीमती संतोष देवी खेदर, ग्राम बेरी (जिला सीकर, राजस्थान) की एक प्रगतिशील कृषक हैं, जो दो हेक्टेयर पूर्णतः सिंचित भूमि पर ट्यूबवेल तथा एक लाख लीटर वर्षा जल संचयन संरचना के साथ कृषि एवं बागवानी आधारित बहुविविध उद्यम संचालित करती हैं, जिसमें बाजरा, ग्वार और गेहूँ जैसी फसलें तथा अनार, मौसंबी, सेब, किन्जु और कागज़ी नींबू जैसे बागवानी वृक्ष शामिल हैं, साथ ही वे चार गायों और एक भैंस का पालन करती हैं तथा

जीवामृत, पंचगव्य और दशपर्णी जैसे जैविक कृषि इनपुट तैयार करती हैं। उनकी नवाचार यात्रा मृदा स्वास्थ्य, संसाधन संरक्षण और उच्च-मूल्य बागवानी पर केन्द्रित रही है, जिसके अंतर्गत 2008 में अनार की व्यावसायिक खेती शुरू कर उन्होंने 2013 में शेखावटी कृषि फार्म एवं नर्सरी की स्थापना की और जल-संरक्षण आधारित तकनीकों जैसे रैनवॉटर हार्वेस्टिंग, ड्रिप सिंचाई, सोलर पम्पिंग, बंडिंग-ट्रेंचिंग को अपनाया; साथ ही उन्होंने अपने बगीचे के लेआउट में अनार पंक्तियों के मध्य मौसंबी का एकीकृत रोपण कर आय वृद्धि सुनिश्चित की तथा गुड़-समृद्ध जैव कीटनाशक मिश्रण विकसित कर परागण वृद्धि और लाभकारी कीटों की उपस्थिति बढ़ाई। राजस्थान बागवानी विभाग, राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड तथा आर ओ सी ए जैसे संस्थानों से नर्सरी पंजीकरण और ऑर्गेनिक प्रमाणन प्राप्त होने के साथ वरिष्ठ अधिकारियों के मार्गदर्शन और निरीक्षण से उनका मॉडल मान्य और सुदृढ़ हुआ। सीमित जल वाले अर्ध-शुष्क क्षेत्र में अनार की स्थापना, श्रमिकों में कौशल की कमी और स्थिर नर्सरी उत्पादन जैसी चुनौतियों का समाधान उन्होंने जल-संरक्षण संरचना निर्माण, ड्रिप सिंचाई, जैविक उत्पादन लागत में कमी, तथा स्थानीय श्रमिकों के प्रशिक्षण के माध्यम से किया। उनकी नर्सरी एवं बागवानी तकनीकों अधिक जल-दक्ष, मृदा स्वास्थ्य को उन्नत करने वाली और क्षेत्रीय स्तर पर गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री उपलब्ध कराने वाली सिद्ध हुई हैं; 2013 से अब तक वह राजस्थान एवं पड़ोसी राज्यों के पचास से अधिक बागों को रोपण सामग्री प्रदान कर चुकी हैं, प्रतिदिन 15-20 किसान उनके खेत का दौरा कर प्रायोगिक प्रशिक्षण लेते हैं, तथा उनके डिजिटल प्लेटफॉर्म व्यापक प्रसार के साधन बने हैं। आर्थिक रूप से उच्च लाभ-लागत अनुपात वाले अनार तथा एकीकृत बगीचे ने आय में वृद्धि की है, सामाजिक रूप से उन्होंने अनेक महिला कृषकों को प्रेरित किया है, और उन्हें अनेक स्तर पर पुरस्कृत किया जा चुका है।

सुश्री प्रीति भण्डारी – आल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

सुश्री प्रीति भण्डारी, मनोज विहार (खत्यारी), जिला आल्मोड़ा की 42 वर्षीय स्नातकोत्तर उद्यमी, दस वर्षों से मशरूम उत्पादन तथा मधुमक्खी पालन में संलग्न हैं और हिमागिरि नेचुरल प्रोडक्ट्स कोओपरेटिव सोसाइटी लिमिटेड का संचालन करती हैं; वे दो 30×20 फीट कमरों में बटन, ऑयस्टर और मिल्की मशरूम का नियंत्रित उत्पादन करती हैं तथा 2020 से मशरूम आधारित मूल्य-संवर्धित उत्पाद विशेषकर स्थानीय रागी के साथ विकसित रागी-मशरूम मोमोज़ का नवोन्मेष कर रही हैं, जो पोषण गुणवत्ता, उपभोक्ता स्वीकार्यता और शेल्फ-लाइफ में सुधार लाता है, और जिनका विपणन आल्मोड़ा मशरूम के माध्यम से किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त वे मशरूम सूप, बगरि, अचार और बिरयानी जैसे उत्पाद भी विकसित करती हैं। उनकी नवाचार यात्रा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के प्रधान वैज्ञानिक डॉ. कृष्णकांत मिश्र के सतत मार्गदर्शन और संस्थागत तकनीकी प्रमाणीकरण से सुदृढ़ हुई, जिससे उत्पादन,

प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन की प्रक्रियाएँ वैज्ञानिक रूप से परिष्कृत हुईं। मूल्य-वर्धित उत्पादों के लिए स्थिर बाजार प्राप्त करना एक प्रमुख चुनौती थी, जिसे उन्होंने गुणवत्तायुक्त उत्पादन, उपभोक्ता संलग्नता और समर्पित आउटलेट स्थापित कर दूर किया। उनके नवाचारों से मशरूम की शेल्फ-लाइफ में वृद्धि, पोषण संवर्धन, स्थानीय संसाधन-उपयोग दक्षता और ग्रामीण आजीविका हेतु सुलभ आय विकल्प सृजित हुए हैं; उन्होंने लगभग दो हजार किसानों को प्रशिक्षण देकर वर्षभर बटन, ऑयस्टर और मिल्की मशरूम उत्पादन को बढ़ावा दिया है। आर्थिक रूप से उनकी इकाई लगभग ₹4 लाख वार्षिक टर्नओवर अर्जित करती है, उनके उद्यम से पाँच-छह व्यक्तियों को वार्षिक रोजगार प्राप्त होता है, और पर्यावरणीय दृष्टि से कृषि अपशिष्ट पुनर्चक्रण एवं पोषण सुरक्षा को सुदृढ़ समर्थन मिलता है। उनकी उपलब्धियों को पूसा संस्थान का नवोनमेषी कृषक पुरस्कार, राज्य स्तरीय तीलू रौतेली सम्मान, रुडसेटी प्रमाणन सहित अनेक सम्मान और मीडिया कवरेज प्राप्त हुई है।

श्रीमती मधु पटेल – हिलसा, नालंदा, बिहार

श्रीमती मधु पटेल, गजेन्द्र बिघा (भोकिलापार, हिलसा, नालंदा) की 46 वर्षीय स्नातक उद्यमी एवं प्रगतिशील कृषक, दो दशकों से मशरूम स्पॉन उत्पादन और मोतीपालन (पर्ल फार्मिंग) जैसी सहायक कृषि गतिविधियों में संलग्न हैं, और 2 हेक्टेयर क्षेत्र में स्पॉन लैब, पर्ल यूनिट तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित करती हैं; उनका नवाचार 2011 में स्थापित मशरूम स्पॉन लैब तथा 2018 में शुरू हुई पर्ल फार्मिंग पर आधारित है, जिसे डी एम आर सोलन और सीफा भुवनेश्वर के तकनीकी मार्गदर्शन ने प्रदेश में स्पॉन-संकट और मत्स्य-आधारित उद्यम अंतराल को भरने योग्य बनाया। वे पैडी स्ट्रॉ पर 12 मशरूम प्रजातियों का उच्च-जीविकाशील स्पॉन नियंत्रित आर्द्रता (80-90%) में किफायती पैकेटों में तैयार करती हैं तथा छत/टैंक आधारित पर्ल कल्चर में राउंड, हाफ-राउंड और डिज़ाइनर पर्ल विकसित करती हैं; इन तकनीकों का विकास 2008-09 के मशरूम पायलटों, 2010 के स्पॉन प्रशिक्षण, 2011 की ₹20 लाख की लैब स्थापना तथा 2018 के ₹5 लाख के पर्ल उद्यम के माध्यम से क्रमिक रूप से हुआ। आत्मा, के वी के, बी ए यू और नूरसराय हॉर्टिकल्चर कॉलेज जैसी संस्थाओं के सहयोग से इन नवाचारों का प्रशिक्षण, प्रमाणीकरण और प्रसार हुआ; चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों कम पूंजी, विपणन कठिनाई, आर्द्रता में ऑयस्टर मशरूम की उच्च मृत्यु दर, निम्न-गुणवत्ता वाले स्ट्रेन को एस एच जी गठन, ऋण-सुविधा, प्रशिक्षण और मीडिया जागरूकता के माध्यम से दूर किया गया। स्पॉन बिक्री (₹50-100/पैकेट) से 20-30% आय-वृद्धि, पर्ल इकाइयों से ₹1-2 लाख/सीज़न की आय, स्पॉन आयात निर्भरता में 70% कमी, पर्ल टैंक प्रणाली से 50% जल-बचत तथा मूल्य-संवर्धन से 15-20% आय-वृद्धि दर्ज हुई है। प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन से बिहार, झारखंड और पश्चिम बंगाल के लगभग 10,000 कृषकों ने

मशरूम और लगभग 200 ने पर्ल तकनीक अपनाई है; सामाजिक रूप से 10,000 महिलाओं का SHG आधारित सशक्तिकरण हुआ, पर्यावरणीय रूप से कृषि-अवशेष पुनर्चक्रण (20% तक) तथा जैविक प्रथाओं से रासायनिक बहाव में कमी आई।

श्रीमती नीलम त्यागी – मुरादनगर, गाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

श्रीमती नीलम त्यागी, गृह संख्या 130 (गली नं. 05, रावल रोड, जीतपुर, मुरादनगर, गाज़ियाबाद) की 50 वर्षीय समाजविज्ञान स्नातकोत्तर, 25 वर्षों की कृषि अनुभव-संपन्न प्रगतिशील कृषक एवं सामाजिक उद्यमी हैं, जो 1.739 हेक्टेयर सिंचित भूमि पर गन्ना-हल्दी अंतःफसली प्रणाली तथा सौर-सक्षम मॉड्यूलर प्रसंस्करण आधारित महिला-केंद्रित मूल्य श्रृंखला मॉडल संचालित करती हैं, और नितारा ब्रांड के तहत लगभग ₹50 लाख वार्षिक टर्नओवर प्राप्त करती हैं। उनकी तकनीक गन्ना एवं हल्दी का अंतःफसली उत्पादन (350 क्विंटल/एकड़ गन्ना, 50 क्विंटल/एकड़ हल्दी), 82% कीटनाशक उपयोग में कमी, 1.86 भूमि उत्पादकता सूचकांक तथा उच्च उपज एवं कीट-रोधी किस्मों के उपयोग को सौर-समर्थित 3 क्विंटल/घंटा प्रोसेसिंग यूनिटों एवं प्रत्यक्ष विपणन तंत्र के साथ संयोजित करती है, जिससे प्रति एकड़ लाभ क्षेत्रीय औसत (₹1.2-1.5 लाख) की तुलना में दोगुना (₹2.85 लाख) से अधिक होता है। उन्होंने उच्च प्रारंभिक निवेश, सामाजिक प्रतिरोध, सीमित बाजार संपर्क और संगठनात्मक ढांचे की कमी जैसी चुनौतियों का समाधान SHG/FPO गठन, चरणबद्ध मशीनरी निवेश, प्रशिक्षण-प्रदर्शन तथा शहरी ब्रांड-लिकिंग द्वारा किया। उनकी तकनीकों से किसानों को 20-35% अधिक लाभ, मृदा स्वास्थ्य व पोषण विविधता में सुधार, प्रत्यक्ष बाजार से बेहतर मूल्य, महिलाओं/युवाओं के लिए व्यापक रोजगार-सृजन तथा सौर प्रसंस्करण से 40% ऊर्जा बचत तथा 82% कीटनाशक कटौती जैसे पर्यावरणीय लाभ प्राप्त हुए हैं; यह मॉडल 14-20 जिलों के लगभग 40,497 किसानों, 300 स्वयं सहायता समूह (4,500 महिलाएँ) तथा कॉपुस अग्रो एफ पी ओ और एन जी ओ नेटवर्कों द्वारा अपनाया गया है। उन्हें अनेक राष्ट्रीय नवाचार पुरस्कार सहित व्यापक मीडिया मान्यता प्राप्त है, और उनका भावी लक्ष्य दक्षिण एशिया में इस मॉडल का विस्तार, मॉड्यूलर प्रोसेसिंग इकाइयों का सुदृढ़ीकरण, लैंगिक-समावेशी प्रशिक्षण तथा अनुसंधान-विस्तार-उद्योग अभिसरण को बढ़ावा देना है।

सुश्री हेमा इंगवाल – सूनकिया, नैनीताल, उत्तराखण्ड

सुश्री हेमा इंगवाल, सूनकिया (पोस्ट भटेड़िया), जिला नैनीताल की 48 वर्षीय स्नातकोत्तर शिक्षिका एवं दस वर्षों के अनुभव वाली महिला उद्यमी हैं, जिन्होंने कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्रों जैसे अगरबत्ती निर्माण, जैम-जेली निर्माण, फल प्रसंस्करण, मोमबत्ती निर्माण, सब्जी उत्पादन, मत्स्य पालन तथा औषधीय पौध उत्पादन में स्वयं को एक दक्ष मास्टर ट्रेनर के रूप में विकसित किया है। उनका नवाचार स्थानीय वनस्पतियों और देशी पशुधन से प्राप्त संसाधनों

(गोबर, गोमूत्र) पर आधारित प्राकृतिक, रसायन-मुक्त खेती का मॉडल है, जिसमें बीजामृत, जीवामृत, घन जीवामृत, कुनाव जल, ब्रह्मास्त्र, नीमास्त्र, छाछ, नीम तेल, नीम खली, नीम कम्पोस्ट तथा राख जैसे शून्य-लागत जैव इनपुटों द्वारा कीट प्रबंधन और पोषण प्रबंधन को सक्षम किया जाता है, जिससे सिंथेटिक कृषि-रसायनों पर निर्भरता कम होती है और ग्रामीण युवाओं—विशेषकर शहरों की ओर प्रवासरत वर्ग—को कृषि व कुटीर उद्योगों को सम्मानजनक आजीविका के रूप में अपनाने हेतु प्रेरणा मिलती है। उनके तकनीकी नवाचार मूल्य संवर्धन, अपशिष्ट पुनर्चक्रण एवं पर्यावरण संरक्षण के एकीकृत मॉडल पर आधारित हैं, जिसमें फल प्रसंस्करण, गोबर-आधारित अगरबत्ती उत्पादन जैसे उद्यम शामिल हैं, जो अपशिष्ट को बाजार योग्य उत्पाद में परिवर्तित करते हैं, तथा फसल अवशेषों और पत्तियों के अपघटन हेतु पूसा डीकम्पोज़र के उपयोग से इन-सीटू अपघटन, अवशेष दहन में कमी और मृदा स्वास्थ्य संरक्षण सुनिश्चित होता है; साथ ही उन्होंने पारंपरिक कुमाऊँनी पिछौड़ा से जुड़े उद्यम को भी प्रोत्साहित किया है, जिससे सांस्कृतिक विरासत और ग्रामीण रोजगार दोनों को सुदृढ़ता मिली है। उनके कार्य को अनेक संस्थानों से तकनीकी मार्गदर्शन, परीक्षण, मान्यकरण तथा प्रशिक्षण-मानकीकरण प्राप्त है, जिसके परिणामस्वरूप महिला प्रशिक्षुओं के मध्य स्वस्थ प्रतिस्पर्धा ने उत्पादन स्तर, गुणवत्ता और विश्वसनीयता को उन्नत बनाया। वन्यजीव क्षति, अनियमित मौसम, पैकेजिंग व परिवहन की उच्च लागत जैसी चुनौतियों का समाधान उन्होंने गतिविधियों के विविधीकरण, जोखिम-वितरण, स्थानीय मूल्य संवर्धन और प्राकृतिक खेती को अपनाकर किया। उन्होंने निर्धन बच्चों व महिलाओं को गोबर-आधारित अगरबत्ती निर्माण का निःशुल्क प्रशिक्षण प्रदान कर आजीविका अवसरों का विस्तार किया है, तथा स्वयं सहायता समूह गठन के माध्यम से महिलाओं को ब्याज-मुक्त ऋण एवं सरकारी योजनाओं तक पहुँच सुनिश्चित की है, जिससे यह एकीकृत मॉडल क्षेत्र में दोहराया जा रहा है। उनके प्रयासों ने आर्थिक, सामाजिक व पर्यावरणीय स्तर पर सकारात्मक प्रभाव उत्पन्न किए हैं, मशीन-आधारित अगरबत्ती व मोमबत्ती उत्पादन से आय वृद्धि, वृक्षारोपण व जल संरचनाओं से पारिस्थितिक तंत्र का संरक्षण, गोबर-आधारित उत्पादों से मवेशी पालन को प्रोत्साहन, वर्षा जल-संचयन से सालभर सञ्जी उपलब्धता, तथा सोलर इस्टॉलेशन से ऊर्जा लागत में शून्य व्यय व अतिरिक्त आय और उनके कार्य को ग्रामीण विकास मंत्रालय, महिलाओं के सशक्तिकरण और सतत ग्रामीण विकास पुरस्कारों सहित विभिन्न मंचों पर मान्यता मिली है; वे के वी आई सी से प्रमाणित मास्टर ट्रेनर हैं और ऑर्गेनिक एग्रीकल्चर अवॉर्ड तथा “बैंक सखी” जैसी पहचानें प्राप्त कर चुकी हैं, जबकि उनकी गतिविधियाँ सोशल मीडिया व किसान-केंद्रित माध्यमों में व्यापक रूप से प्रदर्शित हुई हैं। भविष्य में वे जलवायु-लचीला एवं आत्मनिर्भर ग्रामीण समुदाय निर्माण हेतु पॉलीहाउस विस्तार, सोलर फेंसिंग एवं सोलर रूफटॉप स्थापना, कुमाऊँनी पिछौड़ा उत्पादन का विस्तार, घरेलू स्तर पर मल्लिचंग व

अगरबत्ती निर्माण तथा प्राकृतिक जैव-घोलों (जैसे ब्रह्मास्त्र) के व्यापक उपयोग को बढ़ावा देने के साथ प्राकृतिक खेती, पर्यावरण संरक्षण और वर्षा जल-संचयन पर बड़े पैमाने पर जागरूकता विकसित करना चाहती हैं।

श्रीमती मंजू रानी कश्यप —गाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

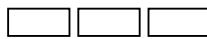
श्रीमती मंजू रानी कश्यप, (गाज़ियाबाद) की 35 वर्षीय स्नातक कृषक हैं, जो छह वर्षों से 6.05 हेक्टेयर पट्टे की पूर्ण सिंचित दोमट-चिकनी मिट्टी पर आधुनिक कृषि उपकरणों—पावर टिलर, लेज़र लेवलर, हार्वेस्टर, हल, स्प्रे पम्प, ट्रैक्टर-ट्रॉली और मिस्ट ब्लोअर—का उपयोग करते हुए वैज्ञानिक खेती करती हैं तथा डेयरी सहकारी समिति की सक्रिय सदस्य हैं। उनका नवाचार कृत्रिम पैलेट/फ्लोटिंग फिश फीड के स्थान पर स्थानीय धार्मिक स्थलों से प्राप्त प्रसाद/उपलेखन अपशिष्ट (मुरमुरा, ख़ेल), बेल व आँवला पत्तियों तथा पोल्द्री अपशिष्ट/भूसी को मिश्रित कर कम लागत वाला मत्स्य आहार तैयार करने पर आधारित है, जिसने मत्स्य वृद्धि दर को तीव्र कर मछली परिपक्वता अवधि को लगभग एक माह तक कम कर दिया; यह नवाचार प्रधानमंत्री स्तर पर तकनीक-प्रेरित प्रेरणाओं, नवप्रवर्तन एवं कौशल-विकास प्रशिक्षणों, पर्यावरण संरक्षण उद्देश्यों तथा कम लागत-अधिक लाभ मॉडल के माध्यम से किसान आय दोगुनी करने की संकल्पना से उत्प्रेरित हुआ। तकनीकी रूप से यह मॉडल धार्मिक अपशिष्ट सहित विभिन्न उद्यम अवशेषों के रूपांतरण, सिंचाई जल प्रवाह के साथ तरल-आधारित इनपुटों के एकीकरण तथा बहुस्तरीय खेती के माध्यम से उत्पादकता व आय वृद्धि को सक्षम करता है, जो स्थानीय संसाधन-आधारित स्वावलंबन और आदिवासी/ग्रामीण समुदायों की परंपरागत प्रथाओं को भी सशक्त करता है। उनके नवाचार को KVK फर्रुखाबाद, सरदार वल्लभ भाई पटेल विश्वविद्यालय मेरठ और भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान पूसा से प्रशिक्षण, परीक्षण, सत्यापन व विस्तार सेवाओं का सहयोग प्राप्त हुआ, जिसने कार्यशालाओं, किसान प्रदर्शनों तथा अनुसंधान सहयोगों के माध्यम से इसे अकादमिक व प्रायोगिक मान्यता प्रदान की। आवश्यक अवसंरचना, वित्तीय संसाधन, मानकीकरण, परीक्षण तथा पंजीकरण सुविधाओं की कमी और वैल्यू-चेन/इन्क्यूबेशन सेंटरों के अभाव जैसी कठिनाइयों के बावजूद उन्होंने स्थानीय अपशिष्ट-उपयोग, संस्थागत सहयोग, किसानों के लिए व्यावहारिक प्रदर्शन तथा संसाधन-साझाकरण के माध्यम से नवाचार को धीरे-धीरे विस्तारित किया। उनके मॉडल ने जल, ऊर्जा और पोषक तत्व दक्षता बढ़ाई, रासायनिक मुक्त उत्पादन को सक्षम किया, मृदा-जल-पर्यावरण संरक्षण सुनिश्चित किया, तथा उच्च लाभ-लागत अनुपात के माध्यम से किसानों की आय को दोगुना करने में सहायक भूमिका निभाई; प्रति हेक्टेयर लगभग 300 मानव-दिवस रोजगार सृजित हुए, उत्पाद की गुणवत्ता एवं बाजार-क्षमता बढ़ी, तथा 12,500 किसानों/महिलाओं/ग्रामीण युवाओं को कौशल-विकास द्वारा सशक्त किया गया, जबकि अपशिष्ट उपयोग

से प्रदूषण में कमी और जलवायु-लचीली खेती को प्रोत्साहन मिला। उनके नवाचारों को अनेक पुरस्कार मिले हैं, और उन्हें नवजीवन फसल, दूरदर्शन उत्तर प्रदेश, डॉक्यूमेंट्री, तथा सरदार वल्लभ भाई पटेल विश्वविद्यालय मेरठ के प्रकाशनों में प्रमुखता से प्रदर्शित किया गया है। भविष्य में वे नवाचार विस्तार, विद्यार्थियों की भागीदारी से व्यापक प्रसार, अनुसंधान मानकीकरण, विश्वविद्यालय इन्क्यूबेशन केंद्र, प्रदर्शन फार्म तथा सरकारी सब्सिडी जैसी संरचनात्मक व्यवस्थाओं को सशक्त करने का सुझाव देती हैं, साथ ही ट्रेसिबिलिटी ऐप्स के विकास तथा पर्यावरण-अनुकूल, उच्च-आय आधारित एकीकृत कृषि प्रणालियों को स्थायी रूप से स्थापित करने हेतु नीति समर्थन की अपेक्षा रखती हैं।

निष्कर्ष: लिंग-संवेदनशील कृषि नवाचार का भविष्य

किसान-नेतृत्व वाले कृषि नवाचार प्रणाली में महिलाओं की भागीदारी को व्यापक, समग्र और सतत रूप से सशक्त बनाना इसलिए अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि महिलाएँ कृषि-आधारित आजीविकाओं के प्रत्येक चरण जैसे बीज चयन, रोपाई, पोषक प्रबंधन, कटाई उपरांत प्रसंस्करण, पशुपालन, गृह-उद्यम, खाद्य संरक्षण तथा बाज़ार-स्तर के मूल्य संवर्धन में केंद्रीय भूमिका निभाती हैं, किन्तु संरचनात्मक बाधाओं के कारण उनके नवाचार अनुभव और तकनीकी योगदान लंबे समय तक औपचारिक संदर्भों में उपेक्षित रहे हैं। उनके द्वारा विकसित समाधान जैसे कम-लागत प्राकृतिक इनपुट, स्थानीय संसाधनों से जैविक कीटनाशक, मिश्रित एवं बहुविविध फसल प्रणाली, महिला-नेतृत्वित प्रसंस्करण इकाइयाँ, समुदाय-आधारित बीज संरक्षण, घरेलू अपशिष्ट का

पुनर्चक्रण, पशुधन-एकीकृत मॉडल, जलवायु-संवेदनशील खेती और खाद्य-पोषण उन्नयन न केवल वैज्ञानिक रूप से व्यवहार्य हैं बल्कि स्थानीय भू-परिस्थितिकी, सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना और आर्थिक यथार्थ के अनुरूप अत्यधिक अनुकूल व लचीले सिद्ध होते हैं। इसीलिए भविष्य की दिशा में यह आवश्यक है कि महिला नवाचारों को औपचारिक मान्यता प्राप्त हो, उनकी प्रौद्योगिकियों का वैज्ञानिक सत्यापन एवं एस ओ पी निर्माण हो, और राज्य/राष्ट्रीय स्तर पर महिला नवाचार रजिस्ट्री तैयार की जाए ताकि ये ज्ञान स्रोत नीति, अनुसंधान और विस्तार प्रणाली का अभिन्न अंग बन सकें। महिला आधारित समूहों को वित्तीय समावेशन, आसान ऋण, नवाचार कोष, सार्वजनिक खरीद समर्थन, बाज़ार-संबद्ध प्रशिक्षण और डिजिटल विपणन प्लेटफॉर्मों से जोड़ना अत्यंत जरूरी है। साथ ही महिला-एक्सटेंशन कर्मियों, मास्टर ट्रेनरों और ग्रामीण नवाचार संरक्षकों का एक संरचित नेटवर्क तैयार करना चाहिए जिससे प्रौद्योगिकी का प्रसार "किसान-से-किसान" मॉडल पर तीव्रता से हो सके। इसके अतिरिक्त, संस्थानों में लिंग-संवेदनशील अनुसंधान अनिवार्य किया जाए, और मूल्यांकन संकेतक तैयार हों जो नवाचार के सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय प्रभावों में महिलाओं की वास्तविक भूमिका और योगदान को स्पष्ट रूप से माप सकें। यदि इन सभी उपायों को समन्वित रूप से लागू किया जाए, तो महिला-नेतृत्वित नवाचार न केवल कृषि को अधिक उत्पादक, विविधतापूर्ण और जलवायु-अनुकूल बनाएगा, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में लैंगिक न्याय, सामाजिक समावेशन, सामुदायिक नेतृत्व और दीर्घकालीन आजीविका सुरक्षा के नए आयाम भी स्थापित करेगा।



रबी फसलों की बुवाई हेतु आधुनिक बुवाई मशीनें

दिलीप कुमार कुशवाहा¹, पी. के. साहू², रमनजीत कौर² एवं अमित गुप्ता²

¹ कृषि अभियांत्रिकी संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

² सस्य विज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारत में रबी का मौसम उत्पादन के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि इसी दौरान गेहूँ, चना, मसूर, मटर, जौ और सरसों जैसी महत्वपूर्ण फसलों की बुवाई की जाती है। मैदानी क्षेत्रों में रबी मौसम की बुवाई अक्टूबर से दिसंबर के बीच होती है। इस अवधि में समय का अत्यधिक महत्व है, क्योंकि देर से बोई गई फसलों की पैदावार सीधे 20-25% तक घट जाती है। रबी फसलों की उत्पादकता कई कारकों पर निर्भर करती है जिनमें समयोचित और सटीकतापूर्ण बुवाई बहुत ही आवश्यक है। गुणवत्तापूर्ण बीज के साथ-साथ बुवाई के समय उचित गहराई, पंक्ति से पंक्ति की दूरी, और उचित बीज दर अपनाना बहुत जरूरी है।

पारंपरिक बुवाई विधियाँ जैसे छिटकवां, देशी हल, कुढ़वा या कुदाल द्वारा बुवाई में कई व्यावहारिक कमियाँ होती हैं जैसे कि बीज अधिक लगना, असमान गिरावट, अनुचित गहराई और श्रमबल पर निर्भरता आदि। आधुनिक सीड ड्रिल और प्लांटर इन कमियों को दूर करते हैं। यह मशीनें बीज को निर्धारित गहराई पर समान दूरी पर रखती हैं, जिससे अंकुरण दर समान होती है और फसल की बढ़वार अत्यधिक अच्छी होती है। आज किसान अपनी आवश्यकता, मिट्टी की स्थिति, फसल की प्रकृति और खेत के आकार के आधार पर विभिन्न प्रकार की सीड ड्रिल और प्लांटर चुन सकते हैं जैसे कि सीड ड्रिल, जीरो-टिल ड्रिल, सीड-कम-फर्टिलाइज़र ड्रिल, हैप्पी

तालिका 1: रबी के मौसम हेतु बुवाई के लिए सीड ड्रिल और प्लांटरों का संक्षिप्त विवरण

क्रम	मशीन का नाम	फसलें	बीज का प्रकार	कार्य क्षमता (हेक्टेयर/घंटा)	विशेषताएँ
1	सीड ड्रिल	गेहूँ, जौ, चना, मसूर, सरसों, मटर	मध्यम आकार के बीज	0.8 - 1.2	फ्लूटेड रोलर के उपयोग से 7-11 पंक्ति में बुवाई
2	जीरो-टिल सीड ड्रिल	गेहूँ, मसूर	मध्यम बीज	0.6 - 1.0	पराली को काटे बिना ही बुवाई की जाती है
3	सीड-कम-फर्टिलाइज़र ड्रिल	गेहूँ, चना, सरसों, जौ	मध्यम-छोटे बीज	0.8 - 1.2	बीज व खाद एक साथ गिरता है और उपज में 20-30% वृद्धि होने की संभावना होती है
4	हैप्पी सीडर	गेहूँ	मध्यम बीज	0.3 - 0.6	खड़ी पराली में बुवाई जिससे पराली जलाने की आवश्यकता नहीं पड़ती
5	सुपर सीडर	गेहूँ	मध्यम बीज	0.4 - 0.8	पराली काटकर मल्लुच बनाना व बुवाई एक ही बार में
6	रेज़्ड बेड प्लांटर	गेहूँ, चना, मटर	मध्यम बीज	0.6 - 1.0	उठी क्यारियों पर बुवाई, नमी व सिंचाई दक्षता अधिक
7	ट्रैक्टर चालित आलू प्लांटर	आलू	बीज कंद	0.4 - 0.6	समान दूरी पर कंद रोपाई, उर्वरक विकल्प
8	ट्रैक्टर चालित लहसुन प्लांटर	लहसुन	कली/क्लोव	0.3 - 0.5	लहसुन कलियों की सटीक दूरी, गहराई व लाइन स्पेसिंग
9	वेजिटेबल / प्याज़ नर्सरी सीडर	प्याज़, मेथी, धनिया	बहुत छोटे बीज	0.1 - 0.2	माइक्रो-मीटरिंग, अत्यधिक सटीक नर्सरी बीज बोनी
10	न्यूमेटिक प्रिंसिजन प्लांटर	चना, मटर, सोयाबीन, मक्का	मध्यम-बड़े बीज	1.5 - 2.5	एयर प्रेशर से बीज चयन व वितरण, बड़े खेतों हेतु उपयुक्त

सीडर, सुपर सीडर, रेज्ड बेड प्लान्टर, ट्रैक्टर चालित आलू प्लांटर, ट्रैक्टर चालित लहसुन प्लांटर, वेजिटेबल प्लांटर / प्याज़ नर्सरी सीडर, नुमेटिक प्रिसिजन प्लान्टर, आदि। तालिका-1 में रबी फसलों की बुवाई में प्रमुख भूमिका निभाने वाले सभी लोकप्रिय सीड ड्रिल और प्लांटर का विवरण दिया गया है।

1. सीड ड्रिल

सीड ड्रिल रबी फसलों में सर्वाधिक उपयोग होने वाली मशीन है। यह गेहूँ, जौ, चना, मसूर, मटर और सरसों की बुवाई के लिए आदर्श मानी जाती है। इसमें फ्लूटेड रोलर तंत्र लगा होता है जो बीज को निर्धारित दर पर गिराता है। इसे 7, 9 और 11-टाइन मॉडल में बनाया जाता है, जो मध्यम और बड़े किसानों के लिए एक विश्वसनीय विकल्प है। किसान इसे आसानी से समझ और संचालित कर सकते हैं। इसकी देखरेख में भी कम खर्च आता है। फ्लूटेड रोलर बीज को क्षति पहुँचाए बिना उचित मात्रा में गिराता है। रबी फसलों में इसकी सफलता का बड़ा कारण इसकी स्थिरता और सटीकता है।

2. सीड-कम-फर्टिलाइज़र ड्रिल

यह ड्रिल प्रिसिजन कृषि की एक उन्नत तकनीक है, जो बीज और उर्वरक दोनों को निश्चित दूरी एवं समान गहराई पर एकसाथ डालती है। यह गेहूँ, चना, जौ और सरसों में यह तकनीक अत्यधिक प्रभावी पाई गई है। इसमें फ्लूटेड रोलर या सेलुलर मीटरिंग सिस्टम लगा होता है, जिससे बीज दर अत्यंत सटीक नियंत्रित रहती है। उर्वरक गिराने के लिए फर्टिलाइज़र ड्रॉप सिस्टम को विशेष रूप से डिजाइन किया गया होता है, जिसमें उर्वरक को बीज से 3-5 सेमी साइड में और 2-4 सेमी नीचे गिराया जाता है। इस तकनीक से उर्वरक सीधे बीज के संपर्क में नहीं आता है, जिससे बीज का उर्वरक के जलने की सम्भावना कम हो जाती है और जड़ों को शुरूआती पोषण तेजी से मिलता है। उर्वरक टैंक में एंटी-ब्रिजिंग या शेकिंग मैकेनिज़्म लगाया जाता है, जो नमी या दानेदार खाद के जमने को रोककर सतत प्रवाह सुनिश्चित करता है। इसमें स्प्रोकेट-चेन या गियरबॉक्स आधारित ट्रांसमिशन सिस्टम भी होता है जो बीज और उर्वरक के गिराने की दर को समायोजित करने में सहायता करता है।

3. जीरो टिल सीड ड्रिल

जीरो टिल सीड ड्रिल धान कटाई के तुरंत बाद गेहूँ, मसूर और अन्य रबी फसलों की बुवाई के लिए सबसे विश्वसनीय और प्रचलित मशीन बन चुकी है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह खेत की किसी भी प्रकार की प्राथमिक या द्वितीयक जुताई की आवश्यकता को समाप्त कर देती है और सीधे बिना मिट्टी उल्टे बीज को बो देती है।

इसके अवशेष युक्त खेतों में काम करने की क्षमता इसे धान-गेहूँ प्रणाली में अत्यंत उपयोगी बनाती है, क्योंकि यह मशीन पराली जलाने की जरूरत पूरी तरह खत्म कर देती है। फरो ओपनर अवशेषों



के बीच संकरी लाइन बनाकर बीज को आवश्यक गहराई पर डालते हैं, जिससे सतही नमी संरक्षित रहती है और अंकुरण बेहतर होता है। जीरो टिल ड्रिल से समय, लागत और डीज़ल की 20-30% तक बचत होती है। पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार तथा पंजाब-हरियाणा जैसे क्षेत्रों में, जहाँ धान की कटाई देर से होती है, यह मशीन समय पर गेहूँ की बुवाई सुनिश्चित कर उपज हानि को कम करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

4. हैपी सीडर

वर्तमान में संसाधन संरक्षण हेतु अनेक यंत्र प्रयोग किये जा रहे हैं, जिनमें से सर्वाधिक उपयोगी एवं बहुउपयोगी यंत्र हैपी सीडर है। जिसको गेहूँ फसल चक्र में फसल अवशेष एवं बुवाई के लिए प्रयोग किया जाता है। यह यंत्र कम्बाईन द्वारा धान कटाई के बाद उसके अवशेषों में गेहूँ की बुवाई हेतु प्रयुक्त किया जाता है। यह यंत्र में नो टिल सीडर कम फर्टी ड्रिल के सभी गुण हैं। इस यंत्र में फसल के



अवशेषों आदि को काटने व दबाने के लिए चौपर ब्लेड लगी रहती है। जो अवशेषों को भूमि में दबा देती है, जिससे बुवाई में सुविधा के साथ-साथ फसल अवशेषों से कार्बन की मात्रा भी मिल जाती है। यह 40 से 45 एच.पी. ट्रैक्टर से चालित होता है।

5. सुपर सीडर

सुपर सीडर धान कटाई के बाद गेहूँ की बुवाई के लिए विकसित की गई एक उन्नत और पर्यावरण-अनुकूल मशीन है, जो पराली

प्रबंधन और सीड ड्रिलिंग को एक ही पास में पूरा करती है। इसमें लगे रोटर ब्लेड धान की पराली को बारीक काटकर मलच के रूप में खेत की सतह पर फैलाते हैं, जिससे मिट्टी की नमी संरक्षित रहती है और कार्बनिक पदार्थ बढ़ता है। साथ ही, इसके हैवी-ड्यूटी फरो ओपनर अवशेषों के बीच उचित गहराई बनाकर बीज और उर्वरक को सटीक रूप से डालते हैं। सुपर सीडर की सबसे खास बात यह है कि यह पराली जलाने की आवश्यकता पूरी तरह समाप्त कर देता है, जिससे वायु प्रदूषण में भारी कमी आती है। यह मशीन मिट्टी की संरचना को सुरक्षित रखते हुए समय और डीज़ल दोनों की बचत करती है। पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश जैसे पराली-प्रभावित क्षेत्रों में यह तकनीक समय पर गेहूँ की बुवाई, बेहतर अंकुरण और दीर्घकालिक मृदा स्वास्थ्य सुधार के लिए अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हो रही है।

6. रेज्ड बेड प्लान्टर

यह यंत्र उठी हुई मेड़ पर बुवाई की तकनीक पर आधारित है इस यंत्र के मुख्य भागों में एक फ्रेम होता है जिस पर सीड कम फर्टिलाइजर बॉक्स लगा होता है। अन्य सीडड्रिल की तरह इसमें भी फरो ओपनर तथा ड्राईव व्हील लगे होते हैं। मिट्टी उठाने के लिये रिजर तथा मेड़ बनाने के लिये मेड शेपर लगे होते हैं। रिजर के ब्लेड बनने वाली मेड़ की वांछित चौड़ाई के अनुसार समायोजन किये जा सकते हैं। इस यंत्र का प्रयोग विभिन्न चौड़ाई की मेड़ बनाने में होता है। कुछ फसलों जैसे कि मक्का एवं सब्जियों आदि को मेड़ पर उगाने से सिंचाई की क्षमता प्रभावी होती है। जिससे फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता में वृद्धि होती है। इस यंत्र से बुवाई करने पर फसल में कम पानी लगता है।



7. ट्रैक्टर चालित आलू प्लांटर

यह यंत्र भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के कृषि अभियांत्रिकी संभाग द्वारा विकसित किया गया है। यह आलू रोपक यंत्र 60 सें.मी. की पंक्ति से पंक्ति की दूरी पर आलू की रोपाई करता है। पौधे से पौधे के बीच की दूरी को 20 से 35 सें.मी. तक व्यवस्थित की जा सकती है। आलू पर रिजर की सहायता से मिट्टी चढ़ाई जा सकती है। बीज को गिराने वाली प्रणाली में एक धुरी पर 60 से.मी. व्यास और 3 से.मी. मोटी चादर से बने बनाये दो घूमने वाले चक्र हैं।



इन चक्रों की परिधि पर एक बीज को पकड़ने के लिए बराबर दूरी पर पिकर आर्म लगे होते हैं। यह पिकर आर्म स्प्रिंग द्वारा जुड़े होते हैं। मुख्य फ्रेम पर लगी हुई फ्रेम शॉफ्ट द्वारा संचालित किये जाते हैं। चक्र पर लगे आर्म ड्रापर में ऊपर जाते समय आलू के बीज को पकड़ लेते हैं और नीचे आने पर बीज को नली में छोड़ देते हैं। नली द्वारा बीज फार द्वारा बनी कूड़ में आता है तथा तितलीनुमा बने रिजर द्वारा मिट्टी से ढककर उस पर मेड़ बना दी जाती है।

8. ट्रैक्टर चालित लहसुन प्लांटर

वतमान में लहसुन की बुवाई अधिकतर मानव से कराई जाती है जिससे समय व लागत अधिक आती है। इस कार्य को सुगम व कम समय में पूर्ण करने के उद्देश्य से ट्रैक्टर चालित नौ कतारीय पूसा लहसुन प्लांटर का विकास किया गया है। इस मशीन द्वारा कतार से कतार व लहसुन के बीज से बीज की दूरी क्रमशः 15 सें. मी. व 7.5 सें.मी. रखी जा सकती है। इसकी कार्य क्षमता 0.2 हेक्टेयर प्रति घण्टा है। इस मशीन से लहसुन के बीज का नुकसान नहीं होता है। इस रोपाई यंत्र को चलाने के लिए 35 अश्व शक्ति के ट्रैक्टर की आवश्यकता होती है। लहसुन के कलियों की नौ कतारों में रोपाई के लिए एक लम्बवत प्याले के आकार की नापन प्रणाली प्रयोग की जाती है। इस यंत्र के मुख्य फ्रेम के साथ नापने के लिए लम्बवत प्लेटों की विपरीत दिशा में कूड़ खोलने वाली युक्तियाँ तथा बीज नलिकाओं को जोड़ा गया है।



9. वेजिटेबल प्लांटर

वेजिटेबल प्लांटर एक उन्नत माइक्रो-सीडिंग मशीन है, जिसे विशेष रूप से प्याज़, मेथी, धनिया, गाजर तथा अन्य अत्यंत छोटे बीजों को अत्यधिक सटीकता से गिराने के लिए बनाया गया है। प्याज़ नर्सरी के लिए यह मशीन सबसे प्रभावी मानी जाती है, क्योंकि छोटे आकार के बीजों को हाथ से समान गहराई पर डालना कठिन होता है। इस मशीन में माइक्रो-मीटरिंग यूनिट, फाइन होल प्लेट या रोलर सिस्टम लगा होता है, जो बीज दर को नियंत्रित करते हुए प्रत्येक बीज को निर्धारित दूरी और गहराई पर गिराता है। इससे बीजों का जमाव, ओवर-सीडिंग और अनियमित वृद्धि की समस्या कम होती है। वेजिटेबल प्लांटर न केवल समय और श्रम की बचत करता है, बल्कि बीज उपयोग को भी 20-30% तक कम कर देता है। समान गहराई और लाइन-स्पेसिंग मिलने से अंकुरण दर में सुधार होता है और नर्सरी पौध स्वस्थ, मजबूत और एकसमान विकसित होते हैं। आधुनिक सब्जी उत्पादक इसे उन्नत, आर्थिक और विश्वसनीय तकनीक के रूप में तेजी से अपना रहे हैं।

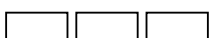
10. न्यूमेटिक प्लांटर

न्यूमेटिक प्लांटर उच्च सटीकता वाली बीज बुवाई मशीन है। यह वैक्यूम या एयर सक्शन तकनीक का उपयोग करके एक-एक बीज को अत्यंत सटीकता के साथ गिराता है। चना, मटर, सरसों तथा मसाला फसलें (धनिया, जीरा, सौंफ) इसके लिए विशेष रूप से उपयुक्त मानी जाती हैं। इसकी विशेषता यह है कि यह बीजों को समान दूरी पर रखता है जिससे पौधों की जनसंख्या पूर्ण नियंत्रण में



रहती है। बड़े खेतों और प्रिंसिपल फार्मिंग में इसका उपयोग वर्षों से बढ़ रहा है क्योंकि इससे उपज और बीज उपयोग दक्षता दोनों बेहतर होती हैं।

रबी फसलों की समय पर बुवाई के लिए उपयुक्त सीड ड्रिल और प्लांटर का चयन अत्यंत महत्वपूर्ण है। आधुनिक कृषि तकनीकों के बढ़ते उपयोग के साथ अब किसान पारंपरिक तरीकों की तुलना में अधिक सटीक, संसाधन-संरक्षक और उच्च दक्षता वाली मशीनों की ओर तेजी से बढ़ रहे हैं। किसानों द्वारा सही मशीन का चयन न केवल उत्पादन बढ़ाने में सहायता करता है, बल्कि कृषि को अधिक टिकाऊ और लाभकारी बनाता है।



रबी फसलों में पर्णिय पोषक तत्व प्रबंधन

टीकम सिंह

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारत में रबी के मौसम में फसलें जैसे गेहूँ, जौ, चना, मसूर, मटर, सरसों और अलसी खाद्य एवं तिलहन उत्पादन के लिए उगाई जाती हैं। इन फसलों की उत्पादकता मुख्यतः संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन पर निर्भर करती है। सामान्यतः उर्वरकों का प्रयोग मृदा परिक्षण के माध्यम से किया जाता है, परंतु रबी मौसम में निम्न तापमान, सीमित मृदा नमी, अधिक मृदा क्षारीयता तथा पोषक तत्वों के स्थिरीकरण के कारण पौधों द्वारा पोषक तत्वों का अवशोषण प्रभावित होता है। ऐसी परिस्थितियों में पर्णिय पोषक तत्वों प्रबंधन एक त्वरित, प्रभावी और किफायती विकल्प के रूप में उभरता है। पर्णिय पोषक तत्वों प्रबंधन में जल में घुलनशील पोषक तत्वों के घोल को पौधों की पत्तियों पर छिड़काव द्वारा दिया जाता है। पत्तियों की क्यूटिकल एवं रंशों (स्टोमाटा) के माध्यम से पोषक तत्व सीधे पौधों की कायात्मिक इकाइयों तक पहुँचते हैं। यह विधि विशेष रूप से उन अवस्थाओं में उपयोगी होती है जब जड़ द्वारा पोषक तत्वों का अवशोषण बाधित हो जाता है।

रबी फसलों में पर्णिय पोषण की आवश्यकता

रबी फसलों में पर्णिय पोषण की आवश्यकता विशेष रूप से इसलिए महसूस की जाती है क्योंकि इस मौसम में फसलों की वृद्धि एवं पोषक तत्वों का अवशोषण कई पर्यावरणीय और मृदागत कारकों से सीमित हो जाता है। रबी में सामान्यतः तापमान कम होता है, जिसके कारण मृदा में सूक्ष्मजीवों की सक्रियता घट जाती है और जैव-रासायनिक प्रक्रियाएँ धीमी पड़ जाती हैं, परिणामस्वरूप, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता कम हो जाती है, भले ही ये तत्व मृदा में पर्याप्त मात्रा में उपस्थित हों। ऐसी स्थिति में जड़ द्वारा पोषक तत्वों का अवशोषण प्रभावी नहीं रह पाता, जिससे पौधों में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। इसके अतिरिक्त, रबी फसलों की खेती प्रायः सीमित मृदा नमी की परिस्थितियों में की जाती है। कम सिंचाई अथवा सिंचाई अंतराल अधिक होने के कारण मृदा विलयन में पोषक तत्वों का परिवहन बाधित होता है। विशेष रूप से शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में यह समस्या और भी गंभीर हो जाती है। पर्णिय पोषण ऐसी परिस्थितियों में अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है, क्योंकि इसमें पोषक तत्व सीधे पत्तियों के माध्यम से पौधों में प्रवेश कर जाते हैं और मृदा नमी पर निर्भरता कम हो जाती है।

भारत के अनेक कृषि क्षेत्रों में रबी मौसम के दौरान मृदाएँ क्षारीय एवं चूनेदार पाई जाती हैं, जिनमें फॉस्फोरस, जिंक, आयरन और बोरॉन जैसे पोषक तत्वों का स्थिरीकरण (फिक्सेशन) अधिक होता है। इससे पौधों को इन तत्वों की उपलब्धता सीमित हो जाती

है, जबकि उनकी आवश्यकता महत्वपूर्ण विकास अवस्थाओं—जैसे कल्ले निकलना, शाखा निर्माण, फूल आना और दाना भराव—पर अधिक होती है। पर्णिय पोषण इन अवस्थाओं में पोषक तत्वों की कमी को शीघ्रता से दूर कर फसलों की क्रियात्मक आवश्यकताओं को पूरा करता है।

रबी फसलों में जैविक एवं अजैविक तनावों, जैसे ठंड, पाले, नमी की कमी तथा रोग-कीट आक्रमण के प्रति संवेदनशीलता भी अपेक्षाकृत अधिक होती है। पर्णिय पोषण द्वारा नाइट्रोजन, पोटाश तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों की त्वरित आपूर्ति पौधों की शारीरिक सक्रियता को बनाए रखती है, जिससे प्रकाश संश्लेषण, एंजाइम गतिविधि और ऊर्जा संचयन में सुधार होता है। इससे पौधों की सहनशीलता बढ़ती है और तनाव की नकारात्मक प्रभावों में कमी आती है।

अंततः, रबी फसलों में पर्णिय पोषण की आवश्यकता इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता को बढ़ाता है और उर्वरकों की कम मात्रा में अधिक प्रभाव सुनिश्चित करता है। मृदा के माध्यम से दिए गए उर्वरकों की तुलना में पर्णिय पोषण में पोषक तत्वों की हानि कम होती है तथा फसलों की उपज और गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार देखा जाता है। इस प्रकार, रबी फसलों की संतुलित एवं टिकाऊ उत्पादन प्रणाली में पर्णिय पोषण एक आवश्यक एवं प्रभावी तकनीक के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

पर्णिय पोषण के प्रमुख लाभ

- पोषक तत्वों की त्वरित उपलब्धता
- कम मात्रा में अधिक प्रभावशीलता
- पोषक तत्वों की लीचिंग एवं स्थिरीकरण से बचाव
- पौधों की जैव-क्रियात्मक सक्रियता में वृद्धि
- उपज एवं गुणवत्ता में सुधार
- आर्थिक दृष्टि से लाभकारी

प्रमुख पोषक तत्वों का अनुप्रयोग

नाइट्रोजन: यूरिया (2%) या डी.ए.पी. (2%) का पर्णिय छिड़काव रबी फसलों में लाभकारी पाया जाता है क्योंकि इससे पौधों को नाइट्रोजन की त्वरित उपलब्धता होती है जो पौधों में निम्नलिखित कार्यों को क्रियान्वित करते हैं:-

- क्लोरोफिल निर्माण
- प्रकाश संश्लेषण में वृद्धि
- हरित वृद्धि एवं दाना भराव में सुधार

अनुप्रयोग की अवस्था:

- गेहूँ एवं जौ: कल्ले निकलने एवं बाली निकलने से पूर्व
- दलहन एवं तिलहन: शाखा निर्माण अवस्था

फॉस्फोरस: रबी फसलों में 2% डीएपी घोल या फॉस्फेट आधारित उर्वरक का पर्णयि छिड़काव पौधों को फॉस्फोरस की त्वरित आपूर्ति करता है। इससे जड़ विकास सुदृढ़ होता है, ऊर्जा स्थानांतरण (ATP निर्माण), फूलन तथा दाना भराव में सुधार होता है, जिसके परिणामस्वरूप फसल की वृद्धि एवं उपज में वृद्धि देखी जाती है। प्रारंभिक वृद्धि अवस्था (जड़ एवं शाखा/कल्ला विकास के समय), शाखा निर्माण या कल्ले निकलते समय या फूल आने से पहले की अवस्थाओं में फॉस्फोरस का पर्णयि छिड़काव करने से जड़ विकास सुदृढ़ होता है, ऊर्जा संचरण बेहतर होता है तथा फूल और वृद्धि में सुधार होता है।

पोटाश: रबी फसलों में 1-2% KNO₃ या K₂SO₄ का पर्णयि छिड़काव पौधों में जल संतुलन बनाए रखने, एंजाइम सक्रियता बढ़ाने तथा रोग-तनाव सहनशीलता सुधारने में सहायक होता है। इससे दाना भराव, उपज और फसल की गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार होता है। शाखा निर्माण/कल्ले निकलते समय, फूल आने से पहले या दाना भराव की प्रारंभिक अवस्थाओं में पोटाश का पर्णयि छिड़काव करने से पौधों की शारीरिक क्रियाएँ सक्रिय रहती हैं, जल संतुलन एवं तनाव सहनशीलता बढ़ती है तथा दाना भराव और उपज में सुधार होता है।

सूक्ष्म पोषक तत्वों का पर्णयि छिड़काव: रबी फसलों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को शीघ्र दूर करने की एक प्रभावी विधि है। जिंक, आयरन, बोरॉन, मैंगनीज एवं कॉपर जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व बहुत कम मात्रा में आवश्यक होते हैं, परंतु पौधों की वृद्धि, एंजाइम क्रियाओं, प्रकाश संश्लेषण तथा फूल-फलन में इनकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। रबी मौसम में ठंड, क्षारीय मृदा एवं कम नमी के कारण इन तत्वों का मृदा से अवशोषण बाधित हो जाता है, इसलिए पर्णयि छिड़काव अधिक लाभकारी सिद्ध होता है। पर्णयि छिड़काव की उपयुक्त अवस्था सामान्यतः शाखा/कल्ला निर्माण से लेकर फूल आने से पहले की अवस्था मानी जाती है। आवश्यकता होने पर फूल अवस्था पर दूसरा छिड़काव भी किया जा सकता है। गेहूँ में 0.5% जिंक सल्फेट, दलहनी फसलों में 0.5% आयरन सल्फेट तथा सरसों में 0.2% बोरिक एसिड का छिड़काव लाभकारी पाया गया है। सूक्ष्म पोषक तत्वों के पर्णयि छिड़काव से पौधों की हरित वृद्धि, फूलन, दाना भराव तथा उपज और गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार होता है।

प्रमुख रबी फसलों में अनुशंसित पर्णयि छिड़काव

गेहूँ

- 2% यूरिया @ 500 लीटर पानी/हेक्टेयर
- 0.5% जिंक सल्फेट (21%)

चना

- 2% डीएपी या 2% यूरिया
- 0.5% आयरन सल्फेट

सरसों

- 1% पोटाश + 0.2% बोरिक एसिड

पर्णयि छिड़काव के आर्थिक एवं पर्यावरणीय महत्व

पर्णयि पोषण न केवल फसलों की उत्पादकता बढ़ाने की एक प्रभावी तकनीक है, बल्कि यह आर्थिक रूप से लाभकारी और पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित भी है। आर्थिक रूप से, पर्णयि पोषण में उर्वरकों की कम मात्रा में अधिक प्रभाव प्राप्त होता है, क्योंकि पोषक तत्व सीधे पत्तियों द्वारा अवशोषित होते हैं। इससे उर्वरकों की उपयोग दक्षता (Nutrient Use Efficiency) में उल्लेखनीय वृद्धि होती है और कुल उर्वरक लागत में कमी आती है। पर्णयि छिड़काव द्वारा पोषक तत्वों की कमी को समय पर दूर करने से फसल की वृद्धि, दाना भराव और गुणवत्ता में सुधार होता है, जिसके परिणामस्वरूप उपज में वृद्धि तथा किसानों की शुद्ध आय बढ़ती है। इसके अतिरिक्त, आपातकालीन परिस्थितियों (जैसे नमी की कमी या ठंड) में यह विधि फसल को नुकसान से बचाकर आर्थिक जोखिम को भी कम करती है।

पर्यावरणीय दृष्टि से, पर्णयि पोषण उर्वरकों के लीचिंग, वाष्पीकरण एवं अपवाह (Runoff) से होने वाली हानियों को न्यूनतम करता है, जिससे भू-जल एवं सतही जल प्रदूषण की संभावना कम हो जाती है। मृदा में अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों के संचय से होने वाले दुष्प्रभावों में भी कमी आती है, जिससे मृदा स्वास्थ्य एवं जैविक गतिविधि सुरक्षित रहती है। साथ ही, संतुलित एवं लक्षित पोषक तत्व आपूर्ति के कारण ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में भी अप्रत्यक्ष रूप से कमी आती है। इस प्रकार, पर्णयि पोषण सतत एवं पर्यावरण-अनुकूल कृषि प्रणाली को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

पर्णयि छिड़काव के दौरान सावधानियाँ

- छिड़काव प्रातः या सायंकाल में करें
- तेज हवा या वर्षा की संभावना में छिड़काव न करें
- अनुशंसित सांद्रता से अधिक घोल न बनाएं
- कीटनाशकों के साथ मिश्रण से पूर्व अनुकूलता जांचें
- साफ पानी का उपयोग करें

निष्कर्ष

रबी फसलों में पर्णयि पोषक तत्वों का प्रयोग संतुलित उर्वरक प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण घटक है। यह न केवल पोषक तत्वों की कमी को शीघ्रता से दूर करता है, बल्कि फसलों की उत्पादकता, गुणवत्ता और आर्थिक लाभ को भी बढ़ाता है। अतः किसानों को मृदा परीक्षण आधारित उर्वरक प्रबंधन के साथ आवश्यकता अनुरूप पर्णयि पोषण को भी अपनाना चाहिए।

मृदा उर्वरता प्रबंधन एवं संरक्षण

सौरभ, सुक्रमपाल सिंह² एवं रणबीर सिंह³

सस्यविज्ञान संकाय, राजा मेहन्द्र प्रताप प्रेम स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुरुकुल नारसन, हरिद्वार, उत्तराखंड
बीज परीक्षण प्रयोगशाला, कृषि निदेशालय परिसर, देहरादून, उत्तराखंड
सस्यविज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

मृदा एवं जल, जीवन एवं कृषि उत्पादन दोनों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन हैं, जिनका संरक्षण बेहद आवश्यक है अर्थात् मृदा एवं जल दोनों कृषि उत्पादन की जीवन रेखा है, इसलिए उनका संरक्षण आज समय की मांग है। मृदा कृषि की आधारशीला है, इसलिए इसकी उर्वरता बनाए रखने हेतु नियमित मृदा परीक्षण, जैविक पदार्थ बढ़ाना, फसल चक्र अपनाना तथा संतुलित उर्वरक उपयोग अत्यंत आवश्यक है। मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता से ही हमें पौष्टिक भोजन प्राप्त होता है, जो मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत आवश्यक है। मृदा संरक्षण से ही आने वाली पीढ़ियों के लिए पोषक आहार सुनिश्चित किया जा सकेगा। लगभग 95 प्रतिशत भोजन मृदा से ही उत्पन्न होता है, इसलिए मृदा स्वास्थ्य बनाए रखना अनिवार्य है। विश्व मृदा दिवस प्रत्येक वर्ष 5 दिसम्बर को स्वस्थ मृदा के महत्व पर ध्यान केन्द्रित करने और मृदा संसाधनों के सतत प्रबंधन का समर्थन करने के साधन के रूप में मनाया जाता है। जिसका उद्देश्य मृदा प्रबंधन की दिशा में बढ़ती चुनौतियों का समाधान करके, मृदा के प्रति जागरूकता बढ़ाकर और समाज को मृदा का स्वास्थ्य बेहतर बनाने के लिए प्रोत्साहित करके स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र और मानव कल्याण को बनाए रखने के महत्व के बारे में जागरूकता बढ़ाता है।

मृदा उर्वरता में सुधार के लिए पोषक तत्वों की आपूर्ति आवश्यक है। जिसके लिये समेकित पोषक तत्व प्रबंधन, रासायनिक व जैव उर्वरकों का संयुक्त उपयोग, जैविक खाद, फसल विविधीकरण, संरक्षित खेती, वैकल्पिक भूमि उपयोग को टिकाऊ कृषि के लिए अपनाना होगा। फसलों की उपज व मृदा स्वास्थ्य में समेकित पोषक तत्व प्रबंधन तथा रासायनिक उर्वरकों व जैविक खादों के संयुक्त प्रयोग से काफी सुधार पाया गया है।



मृदा स्वास्थ्य का अर्थ: मृदा स्वास्थ्य का तात्पर्य मृदा की उस क्षमता से है, जिसके द्वारा वह पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक पोषक तत्व, जल और वायु का उपयुक्त संतुलन बनाए रख सके। इसके साथ ही, मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों का संतुलन बनाए रखते हुए दीर्घकालिक उत्पादकता और पारिस्थितिकी तंत्र की आवश्यक सेवाएं प्रदान कर सके।

मृदा स्वास्थ्य सम्बन्धित चुनौतियां: बढ़ती जनसंख्या, सीमित प्राकृतिक संसाधन और सघन खेती तकनीकियों के प्रचलन के बाद, मृदा स्वास्थ्य आज कृषि और वातावरण दोनों के लिए सबसे गम्भीर चुनौती बन गयी है। लगातार मृदा कटाव, असंतुलित रासायनिक उर्वरक प्रयोग, जलवायु परिवर्तन और जनसंख्या दबाव से मृदा गुणवत्ता घट रही है। यदि मृदा स्वास्थ्य बिगड़ता रहा, तो खाद्य सुरक्षा, पोषण, किसान आय और पारिस्थितिकी संतुलन सभी पर गंभीर संकट उत्पन्न होगा।

मृदा उर्वरता में गिरावट के प्रमुख कारण

मृदा कटाव, पोषक तत्वों का दोहन, मृदा का भौतिक निम्नीकरण, मृदा में जैव पदार्थ एवं जैव क्रियाशीलता में कमी, मृदा





मृदा उर्वरता बढ़ाने के तरीके:

निम्नलिखित उपायों द्वारा खेती में टिकाऊपन एवं मृदा उर्वरता प्रबंधन किया जा सकता है:-

1. **सन्तुलित पादप पोषण:** संतुलित पादप पोषण की व्याख्या विश्व में सर्वप्रथम जर्मन रसायनशास्त्री जस्टस निकोलस वॉन लीबिंग (1803-1873) ने अपने द्वारा प्रतिपादित न्यूनता का नियम के द्वारा की थी। इस नियम के अनुसार यदि मृदा में किसी एक पोषक तत्व की कमी है, तब पौधों की वृद्धि इस सीमित तत्व द्वारा निर्धारित होगी, भले ही अन्य आवश्यक पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में उपस्थित क्यों न हों। इस सीमित तत्व के मृदा में प्रयोग से पौधों की वृद्धि को बढ़ाया जा सकता है। यदि एक से अधिक तत्वों की कमी पाई जाती है, तो न्यूनतम मात्रा वाला तत्व पौधों की वृद्धि को अधिकतम प्रभावित करता है।

जिन तत्वों को मांग से अधिक मात्रा में डाला जाता है, उनकी सम्पूर्ण मात्रा पौधों द्वारा अवशोषित नहीं हो पाती है और निक्षालन अथवा किसी अन्य माध्यम से इनकी हानि हो जाती है। साथ ही कुछ पोषक तत्वों जैसे; आयरन, जस्ता, कॉपर आदि की अधिक मात्रा के प्रयोग से पौधों में विषाक्तता हो सकती है। इस प्रकार असंतुलित पोषण प्रबंधन सीमित संसाधनों का दुरुपयोग है। एक पोषक तत्व की अत्यधिक मात्रा में उपस्थित अन्य तत्व के अवशोषण को प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए फॉस्फोरस व पोटेशियम तत्वों की अनुपस्थिति में पौधों की नाइट्रोजन के प्रति अनुक्रिया कम होती रहती है। नाइट्रोजन के साथ यदि फॉस्फोरस एवं पोटेशियम की उपयुक्त मात्रा का प्रयोग किया जाए, तो फसल के उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है तथा पोटाश डालने से उसे और अधिकतम स्तर

अम्लीयकरण, क्षारीयकरण एवं लवणीकरण, अदक्ष मृदा प्रबंधन एवं मृदा प्रदूषण तथा ऊपरी सतह से जल एवं वायु द्वारा मृदा कटाव होने से जैव पदार्थ एवं पोषक तत्वों की एक बड़ी मात्रा की हानि हो जाती है, जिससे मृदा की उर्वरता में सार्थक कमी आ जाती है। मृदा कटाव के मुख्य कारकों में वनों की कटाई, अत्यधिक पशु-चरण एवं अवैज्ञानिक मृदा प्रबंधन आदि हैं। बहुत से क्षेत्रों में किसानों द्वारा फसल विविधीकरण को अपनाया जा रहा है, जिसमें एक वर्ष में दो या अधिक फसलों, विशेषकर अनाज, व्यावसायिक अथवा चारा फसलों को उगाया जाता है। ये फसलें मृदा से पोषक तत्वों की बहुत बड़ी मात्रा का दोहन करती हैं। पोषक तत्वों की जितनी मात्रा इन फसलों द्वारा अवशोषित की जाती है, यदि मृदा में कम से कम उतनी मात्रा वापस न लौटाई जाए, तो मृदा में पोषक तत्वों का नकारात्मक संतुलन लगातार बढ़ता चला जाता है, जिसे पोषक तत्व खनन कहते हैं। वर्तमान समय में पोषक तत्व खनन, खाद्य सुरक्षा के लिए एक बहुत बड़ा खतरा है और एक चुनौती है। कृषि अनुसंधानों से पता चला है कि असंतुलित उर्वरक प्रयोग अपनाने के कारण मृदा से पोषक तत्व खनन की समस्या में भी तीव्रता आती है।

सारणी 1: विभिन्न सूक्ष्म पोषक तत्वों की पूर्ति हेतु भूमि में डालने और पर्णिय छिड़काव के लिए उर्वरकों की आवश्यक मात्रा/दर

उर्वरक	भूमि में डालने की मात्रा (कि.ग्रा./हे.)	पर्णिय छिड़काव (प्रति हेक्टेयर)
जिंक सल्फेट	15-25	5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट, 2.5 कि.ग्रा. बुझा चूना तथा 1000 लीटर पानी
फेरस सल्फेट	50-100 मृदा प्रयोग अधिक उपयोगी नहीं है।	10 कि.ग्रा. फेरस सल्फेट, 2.5 कि.ग्रा. बुझा चूना तथा 1000 लीटर पानी
मैंगनीज सल्फेट	20	5 कि.ग्रा. मैंगनीज सल्फेट, 2.5 कि.ग्रा. बुझा चूना तथा 1000 लीटर पानी
बोरैक्स	5-10	1 कि.ग्रा. बोरैक्स तथा 1000 लीटर पानी
सोडियम मोलिब्डेट	1-2	10 कि.ग्रा. सोडियम मोलिब्डेट तथा 1000 लीटर पानी

तक पहुँचाया जा सकता है। साथ ही गंधक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों का भी आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जाए। पौधों में वृद्धि तथा उत्पादन को कम करने के लिए जिम्मेदार सूक्ष्म तत्वों में वर्तमान समय में जस्ता अत्यधिक महत्वपूर्ण है, जो विस्तृत रूप से सभी गहन कृषि वाले क्षेत्रों में आवश्यक स्तर से कम है। सूक्ष्म-पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के लिए सूक्ष्म पोषक तत्वों को भूमि में डालकर अथवा पर्णिय छिड़काव द्वारा दूर किया जा सकता है।



संतुलित पोषण प्रबंधन से न केवल उत्पादन में वृद्धि होती है, अपितु पोषक तत्व उपयोग क्षमता व जल उपयोग क्षमता को भी बढ़ाया जा सकता है।

2. समेकित पोषक तत्व प्रबंधन: कृषि वैज्ञानिकों द्वारा प्रायः समेकित पोषक तत्व प्रबंधन की सिफारिश की जाती है। समेकित पोषक तत्व प्रबंधन का अभिप्राय पोषक तत्वों के विभिन्न स्रोतों (जैविक खाद, रसायनिक उर्वरक, जैव उर्वरक, हरी खाद, खलियां आदि) से पोषक तत्वों की फसल को आपूर्ति करने से है। जैविक खादों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट एवं केंचुओं की खाद प्रमुख हैं। हरी खाद के लिए सनई, ढैंचा, मूँग, ग्वार अथवा लोबिया आदि को उगाया जा सकता है। जैव उर्वरकों में राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, एजोस्पीरिलम, पी. एस. बी. एवं वैम आदि शामिल हैं। नाइट्रोजनधारी उर्वरकों में यूरिया प्रमुख है। डी.ए.पी. से नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की उपलब्धता होती है। पोटेशियम डालने के लिए मुख्य रूप से म्यूरेट ऑफ पोटाश का प्रयोग किया जाता है। गंधक के प्रमुख स्रोत गंधक तत्व, जिप्सम एवं आयरन पायराइट्स हैं। जिंक की कमी को दूर करने के लिए जिंक सल्फेट उर्वरक का प्रयोग किया जा सकता है। समेकित पोषक तत्व प्रबंधन की संकल्पना नई नहीं है, परन्तु विभिन्न स्थानों तथा फसल प्रणालियों में अन्तर होने के साथ-साथ किसान के उद्देश्यों तथा सामाजिक, आर्थिक स्थिति के अनुसार इसका प्रारूप बदलता रहता है।

3. फसल चक्र: विविध फसल चक्र अपनाने से मृदा में पोषक तत्व संतुलित रहते हैं और दहलनी फसलें नाइट्रोजन स्थिरीकरण

कर उर्वरता बढ़ाती हैं। भारत में धान-गेहूँ, मक्का-गेहूँ, कपास-गेहूँ, तिलहन-दलहन-गेहूँ व अन्य मिश्रित खेती आदि फसल चक्र अपनाये जाते हैं। ये सभी फसल क्रम भूमि में तत्वों का भारी दोहन करते हैं। सबसे अधिक नाइट्रोजन उर्वरकों पर ध्यान देने के कारण फॉस्फोरस, पोटाश, गंधक तथा सूक्ष्म तत्वों की कमी उत्पादन के उच्चतम स्तर तक पहुँचने में बाधक है। यदि किसी छोटे फसल काल वाली फसल को हरी खाद के रूप में इन फसलों के बीच में उगा लिया जाए, तो न केवल गंधक व सूक्ष्म तत्वों की पूर्ति होती है, अपितु भूमि की भौतिक व जैविक स्थिति में भी सुधार होता है। यदि धान से पहले हरी खाद को लिया जाए, तो धान के साथ-साथ यह अगली गेहूँ की फसल के लिए भी उत्पादन बढ़ाने में लाभदायक है एवं कुल उर्वरक आवश्यकता को कम करती है। सबसे कम समय में नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाली मुख्य फसल ढैंचा है। इसे धान की रोपाई से पूर्व ऊँचे एवं नीचे स्थानों पर उगा सकते हैं। ताजा हरी खाद की फसल मृदा में मिट्टी पलट हल से दबाने पर सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता तीव्र हो जाती है जिससे हरी खाद वाली फसल को नाइट्रोजन की आपूर्ति हो जाती है। हरी खाद वाली फसल को गलाने-सड़ाने में तीव्रता लाने के लिए मृदा में जैविक पदार्थ और कार्बन: नाइट्रोजन का अनुपात 15:1 और 25:1 के मध्य होना अति आवश्यक है।

सारणी 2: विभिन्न हरी खाद वाली फसलों का नाइट्रोजन यौगिकीकरण में योगदान

फसल का नाम	वानस्पतिक नाम	उगाने की ऋतु	हरे पदार्थ की औसत उपज (टन/हेक्टेयर)	हरे पदार्थ में नाइट्रोजन (प्रतिशत)	मृदा में नाइट्रोजन का योगदान (कि.ग्रा.)
सनई	क्रोटेलेरिया जंसिया	खरीफ,जायद	15	0.43	84
ढैंचा	सैस्बेनिया एक्युलिटा	खरीफ,जायद	14	0.42	77
मूँग	विग्ना रैडिएटा	खरीफ,जायद	6	0.53	39
लोबिया	विग्ना अंगुईकुलेटा	खरीफ,जायद	11	0.49	56
ग्वार	साइमोपासिस टेप्ट्रागोनोलोवा	खरीफ,जायद	14	0.34	62

सैजी	मैलीलोटस अल्बा	रबी	21	0.51	134
खेसारी	लेथाइरस सेटाइवस	रबी	9	0.54	61
बरसीम	ट्राईफोलियम आलेक्लजेंड्रिनम	रबी	11	0.43	61

स्रोत: यावलकर एवं साथी (1996)

4. **फसल अवशेष प्रबंधन:** विभिन्न फसल अवशेष जैसे गेहूँ अवशेष, कपास के इण्डल, गन्ने की सूखी पत्तियाँ तथा धान का भूसा इत्यादि की बड़ी मात्रा उपलब्ध होती है परन्तु कुछ आर्थिक बाधाएँ जैसे फसल अवशेषों का पशु चारे व इंधन के रूप में प्रयोग आदि से केवल कुछ मात्रा में ही फसल अवशेषों का खेत में पुनर्चक्रण होता है। साथ ही अगली फसल की बुवाई में बाधा उत्पन्न करने के कारण उन्हें खेत में ही जला दिया जाता है। कई प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि गेहूँ व धान का भूसा डालने से उत्पादन बढ़े या नहीं, परन्तु मृदा उर्वरता पर अवश्य ही धनात्मक प्रभाव पड़ता है। अतः फसल अवशेषों के प्रयोग से मृदा उर्वरता व उत्पादकता को बढ़ाकर संसाधित उत्पादन के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सकता है। जैविक खेती में फसलों के अवशेष खेत में ही सड़ा-गला दिए जाते हैं, जिससे इनको जलाने से होने वाले प्रदूषण को समाप्त कर, मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा में वृद्धि होती है और मृदा उपजाऊ बनती है। मृदा में फसल अवशेष का स्थाई आवरण होने के कारण उसमें उपस्थित सूक्ष्म जीवों की जैविक गतिविधियाँ बढ़ जाती है, जिसके परिणामस्वरूप फसल को समुचित मात्रा में पोषक तत्व प्राप्त होते हैं। अवशेष को मृदा सतह पर बनाए रखने से न केवल मृदा सुधार होगा बल्कि सूक्ष्म वातावरण भी फसल के अनुकूल होगा।



5. **जैविक खाद:** आज की सघन खेती के युग में भूमि की उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिए प्राकृतिक खादों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट एवं हरी खाद मुख्य है। भारतीय संदर्भ में गोबर की खाद, विभिन्न प्रकार की कम्पोस्ट, केंचुए वाली कम्पोस्ट, बायोगैस स्लरी, खलियाँ, मुर्गी, भेड़ अथवा बकरी से प्राप्त खाद एवं हरी खाद मुख्य रूप से प्रयोग में आने वाले जैविक खाद के स्रोत हैं। मृदा की उर्वरता को बनाए रखने के लिए तथा भविष्य में मृदा के उपजाऊपन को क्षति न हो, इसके लिए यह आवश्यक है कि जैविक खाद का खेती में निरंतर उपयोग



हो। यदि सभी स्रोतों को मिला लिया जाए तो केवल 2 टन प्रति हेक्टेयर औसत की जैविक खाद भारत में उपलब्ध है, जो सामान्य प्रस्तावित 10-12 टन प्रति हेक्टेयर की मांग से बहुत कम है। फसल के अवशेषों को खेतों में ही प्रयोग करके, ग्रामीण एवं शहरी अपशिष्ट का पुनर्चक्रण तथा कम्पोस्ट बनाकर उसकी पोषण मात्रा में वृद्धि कर किसानों को जैविक खाद के प्रति आकृष्ट किया जा सकता है। जैविक खादों के प्रयोग से मृदा का जैविक स्तर एवं जीवाणुओं की संख्या बढ़ जाती है और मृदा की उपजाऊ शक्ति बनी रहती है। प्राकृतिक खादों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट व हरी खाद प्रमुख है, जो पौधों के लिए आवश्यक खनिज प्रदान कराते हैं और जिससे फसलों का उत्पादन बढ़ता है। इसके प्रयोग से ह्यूमस की वृद्धि होती है एवं मृदा की भौतिक दशा में सुधार होता है। पौधों को पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्वों की प्राप्ति हो जाती है। जैविक खाद सड़ने पर कार्बनिक अम्ल देकर मृदा का पी.एच. 7 से कम कर देती है। जिससे पोषक तत्व पौधों को काफी समय तक मिलते रहते हैं तथा दूसरी फसलों को भी लाभ मिलता रहता है।

6. **सीवेज-स्लज, शहरी अपशिष्ट और कारखानों का अपशिष्ट जल:** सीवेज-स्लज, शहरी अपशिष्ट और कारखानों का अपशिष्ट जल भी पोषक तत्वों के प्रचुर भण्डार होते हैं परन्तु पौधों में उपयोग से पूर्व इनका उपयुक्त उपचार करना आवश्यक है, जिससे कि हानिकारक तत्वों को हटाया जा

सके। इसके समुचित प्रबंधन व पुनर्चक्रण से भारतीय कृषि को लाभान्वित किया जा सकता है। शहरों के बाहरी क्षेत्रों में यद्यपि इनका प्रयोग कुछ सब्जियाँ उगाने में अवश्य होता है, इसके अलावा इनके प्रयोग से धान व अन्य फसलों के उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। यदि इन पदार्थों का उपयुक्त उपचार कर इसका प्रबंधन किया जाए तो ये न केवल रासायनिक उर्वरक का पूरक बन सकते हैं, अपितु वातावरणीय प्रदूषण को भी कम करने में उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

7. **रासायनिक उर्वरक:** यदि पोषक तत्वों की आपूर्ति रासायनिक उर्वरकों से की जा रही है तो उनके प्रयोग में विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। फॉस्फोरस एवं पोटेशियम उर्वरकों का प्रयोग प्रायः आधार खुराक के रूप में बुवाई के समय करना चाहिए, जबकि नाइट्रोजन उर्वरकों का प्रयोग, विशेषकर खाद्यान्न फसलों में एक बार की बजाय दो या तीन बार करना अधिक उपयोगी रहता है। यूरिया के स्थान पर नीम लेपित यूरिया अधिक लाभकारी सिद्ध हुआ है। रासायनिक उर्वरकों से गहन कृषि संभव हो पाई जिनसे वनों की कटाई कम हुई है तथा पर्याप्त खाद्यान्न उत्पादन हो पा रहा है। अतः निम्न उत्पादकता वाली भूमियों में उर्वरक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है, जहाँ उत्पादन बढ़ाने की बहुत आवश्यकता है।
8. **जैव उर्वरक:** जैव उर्वरक एक जीवाणु खाद है, इसमें मौजूद लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु वायु-मंडल में पहले से विद्यमान नाइट्रोजन फसल को उपलब्ध करवाते हैं और मृदा में मौजूद अघुलनशील फास्फोरस को पानी में घुलनशील बनाकर पौधों को देते हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान से यह सिद्ध हुआ है कि जैविक खाद के उपयोग से 30 से 40 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर भूमि को मिलती है और उपज 10 से 20 प्रतिशत तक

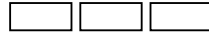
बढ़ जाती है। इसी तरह फास्फो बेक्टीरिया और माइकोराइजा उर्वरक के उपयोग से खेत में फॉस्फोरस की उपलब्धता में 20 से 30 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी होती है। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करने के बदले अगर जैविक खाद का उपयोग किया जाता है, तो उत्पादकता में वृद्धि होती है और यह भूमि की उर्वरता को बढ़ाती है। जैव उर्वरक विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवियों (जीवाणु, कवक, एक्टीनोमाइसिटिस आदि) की जीवित कोशिकाएं हैं, जिनमें नाइट्रोजन यौगिकीकरण व फॉस्फोरस को घोलने की क्षमता होती है, जिससे मृदा में पोषक तत्वों को पौधों के लिए उपलब्ध कराया जाता है। पादप पोषण में पूरक, नवीनीकरण तथा पर्यावरणीय स्रोत के रूप में यह महत्वपूर्ण घटक तथा समेकित पादप पोषण प्रबंधन का आवश्यक अंग है। विभिन्न जैव उर्वरकों में फली वाली फसलों के लिए राइजोबियम का सबसे अधिक उपयोग हुआ है।

9. **जैविक खेती:** जैविक खेती जैव विविधता को बढ़ावा देती है, मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण करती है और कृत्रिम कीटनाशकों और उर्वरकों का उपयोग न किए जाने से जल प्रदूषण कम होता है, जिससे कृषि की दीर्घकालिन स्थिरता सुनिश्चित होती है। जैविक खेती उपभोक्ताओं को स्वस्थ और सुरक्षित भोजन का विकल्प प्रदान कर महत्वपूर्ण लाभ प्रदान करती है।
10. **पलवार:** जब हम हमारी फसलों की कटाई के बाद दाने छोड़कर फसलों के जो अवशेष बचते हैं, वह अगर भूमि पर आच्छादन स्वरूप डालते हैं, तो अनंत कोटी जीवजंतु और केंचुए भूमि के अंदर बाहर लगातार चक्कर लगाकर 24 घंटे भूमि को बलवान, उर्वरा एवं समृद्ध बनाने का काम करते हैं और हमारी फसलों को बढ़ाते हैं।

सारणी 3: मृदा स्वास्थ्य हेतु वैज्ञानिक समाधान एवं प्रभाव

समाधान	वैज्ञानिक साक्ष्य/डेटा	प्रभाव
फसल चक्र एवं दलहनी फसलें	दलहनी फसलें प्रति हेक्टेयर 30-60 कि.ग्रा./नाइट्रोजन स्थिरीकरण करती है (एफएओ, 2020)	रासायनिक नाइट्रोजन उर्वरक की आवश्यकता घटती है, मृदा उर्वरता सुधरती है।
संरक्षण कृषि	भारत में 10 वर्ष के अध्ययन में जैविक कार्बन 0.36 प्रतिशत से बढ़कर 0.55 प्रतिशत हुआ (भा.कृ.अ.प., 2022)	मृदा कार्बन संचयन, कटाव में 25-30 प्रतिशत कमी, उत्पादकता में 10 से 15 प्रतिशत वृद्धि
जैविक खाद एवं कम्पोस्ट	वर्मीकम्पोस्ट से उपलब्ध नाइट्रोजन में 15 से 20 प्रतिशत वृद्धि (भा.कृ.अ.प., 2019)	सूक्ष्मजीव गतिविधि बढ़ी, फसल की गुणवत्ता एवं उत्पादन में सुधार
हरी खाद	ढेंचा से प्रति हेक्टेयर 4 से 5 टन जैविक पदार्थ एवं 80-100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की आपूर्ति (एनवीएसएसएलसी, 2021)	जैविक कार्बन और मृदा की संरचना में सुधार
समेकित पोषक प्रबंधन	रासायनिक, जैविक खाद के प्रयोग में गेहूँ की उपज 12-15 प्रतिशत अधिक (एनवीएसएसएलसी, 2020)	दीर्घकालिक मृदा उर्वरता एवं सतत उत्पादन
जल एवं मृदा संरक्षण तकनीक	पलवार से मृदा की नमी धारण क्षमता में 20-25 प्रतिशत वृद्धि (भा.कृ.अ.प.-क्रीडा 2021)	सूखा सहनशीलता एवं फसल उत्पादकता में वृद्धि
प्रदूषण नियंत्रण एवं अपशिष्ट प्रबंधन	औद्योगिक अपशिष्ट मुक्त क्षेत्रों में सूक्ष्मजीव विविधता 40 प्रतिशत अधिक (एनईईआरआई, 2018)	स्वस्थ मृदा पारिस्थिति तंत्र और सुरक्षित खाद्य उत्पादन

मृदा वह है, जहाँ से भोजन की शुरुआत होती है। मृदा हमारे अधिकांश भोजन (कृषि उत्पादों का प्रमुख स्रोत) का स्रोत है और हमारे ग्रह की जीवन-रक्षा प्रणाली का केन्द्र है। मृदा पौधों और पेड़ों को पोषक तत्व, जल और खनिज प्रदान करती है, कार्बन जमा करती है और अरबों कीटों, छोटे जीवों, जीवाणुओं और अनेक प्रकार के सूक्ष्मजीवों का घर है। एफएओ के अनुसार, हमारे ग्रह की जैविक विविधता का एक चौथाई भाग मृदा में उपलब्ध है। आज खेती को परंपरागत खेती से बाहर लाकर आधुनिक खेती की ओर ले जाने की आवश्यकता है, जिसके लिए खेतों की भूमि का मृदा परीक्षण कराकर कम लागत में अधिक फसलोत्पादन एवं लाभ कमाया जा सकता है। बस आवश्यकता है, थोड़ी सी सावधानी बरतने की और लगन के साथ तकनीक सीखने की। टिकाऊ फसलोत्पादन लेने के लिए किसानों को नियमित अन्तराल पर मृदा की जांच करवाना चाहिए। इसके लिए सही नमूने का चयन और प्रतिवेदन को फसल बुवाई से पूर्व प्राप्त करना चाहिए। इस कार्ड के आधार पर फसलों में उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। टिकाऊ उत्पादन से स्वच्छ अनाज उपजाओं तथा स्वच्छता के साथ “स्वस्थ धरा खेत हरा” के सपने को साकार करें।



अमरुद के बागों का स्थापना के उपरान्त प्रबंधन

मधुबाला ठाकरे, पूनम मौर्या, शुभम जग्गा एवं संजय सिरोही

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

फलों के बागों को लगाने के पश्चात् उनका प्रबंधन अति आवश्यक है। बाग स्थापना के शुरू के वर्षों में की गई त्रुटियों, भविष्य में फल उत्पादन की गुणवत्ता, मात्रा तथा आय सभी को प्रभावित करती है। इस लेख में अमरुद के बागों की स्थापना के उपरान्त प्रबंधन को निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत समझाया गया है:

1. संधाई : यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य है जो कि पौधों के स्थापित होने के बाद से ही प्रारम्भ हो जाता है और भविष्य में फलों के उत्पादन को प्रभावित करता है। कभी भी मूलवृत्त (रूट स्टॉक) को ना बढ़ने दें। समय-समय पर इससे निकले हुए कल्लों को हटा दें। अन्यथा यह बढ़कर मुख्य पौधे को बढ़ने नहीं देगा तथा मुख्य तने को सीधा रखने के लिए सहारा (स्टेकिंग) दें। मुख्य तने से दो, तीन या अधिकतम चार शाखाओं को बढ़ने दें। जितनी सघन बागवानी होती है जमीन से मुख्य तने पर प्राथमिक शाखाओं की दूरी उतनी कम होती है। जैसे मीडो बागवानी में जमीन से 30-40 सेमी ऊपर से प्राथमिक शाखाओं को बढ़ने दिया जाता है। शुरुआती वर्षों में फल न लें एवं उन्हें हटा दें। ज्यादातर फलों में तीन साल के बाद ही फल लेने की सलाह दी जाती है।

2. गैप फिलिंग : (खाली जगह को भरना): यदि किसी वजह से बाग के कुछ पौधे मर गए हैं तो शीघ्र ही उनके स्थान पर नया पौधा लगायें। जब भी नर्सरी से पौधे खरीदे तो जरूरत से ज्यादा ही खरीदें, इस बात का ध्यान रखें की पौधों को आवश्यक संख्या से 10% अधिक ही खरीदें। जिससे की आसानी से गैप फिलिंग की जा सके। यदि बाग में एक से ज्यादा किस्में लगाई गई हैं तो गैप फिलिंग के समय उसी किस्म का पौधा लगायें। अन्यथा बाग के बड़े होने के पश्चात् बाग की आभा प्रभावित होगी। क्योंकि हर किस्म का अपना विशेष आकार का छत्रक होता है। इसके साथ ही बाकी की कृषि क्रियाएँ करने में आसानी होगी।

3. उचित जल निकास एवं सिंचाई : सामान्यतः फलों के पौधों को मानसून में लगाया जाता है। यही सबसे उपयुक्त समय होता है किन्तु इसी समय बाग में जल भराव की समस्या होती है। अतः वर्षा उपरांत बाग में एकत्रित जल को निकालना आवश्यक है। इसके लिए यह आवश्यक है की बाग को समतल रखा जाए अर्थात् बीच में गड्डे इत्यादि नहीं होने चाहिए। जिससे वर्षा का जल स्वयं ही प्राकृतिक ढलान से निकल जाए। नाली पद्धति से सिंचाई की व्यवस्था हो तो सिंचाई की नालियाँ सही दिशा में होनी चाहिए ताकि इनसे पानी को

आसानी से निकाला जा सके। इसके अलावा बाग में जब भी सिंचाई की आवश्यकता हो उस समय सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। सिंचाई चाहे टपक विधि से हो या नाली विधि से, एक बात का हमेशा ध्यान रखना चाहिए की हल्की सिंचाई ना की जाये। दूसरे शब्दों में कम अंतराल पर हल्की सिंचाई करने की बजाय, अपेक्षाकृत अधिक समय अंतराल में ज्यादा पानी से गहरी सिंचाई करें। इसका कारण यह है की फलों के पौधों (लेयरिंग से बने हो या ग्राफ्टिंग से) में हल्की सिंचाई, जिसमें पानी भूमि की ऊपरी सतह तक की सीमित होता है की वजह से जड़े मिट्टी की ऊपरी सतह में ही विकसित हो पाती हैं जिससे जब पौधे बड़े होते हैं तो तेज हवा से उनके गिरने की संभावना बढ़ जाती है। यदि बाग फरवरी-मार्च में लगाया गया है तो ग्रीष्म ऋतु में सिंचाई का और भी ज्यादा ध्यान रखना चाहिए। टपक सिंचाई विधि, सिंचाई के लिए सबसे उपयुक्त होती है। इस विधि में पानी लगातार बूंद- बूंद करके पौधों की जड़ों तक पहुँचता रहता है एवं गहरी जड़ों तक पानी की पहुँच बनी रहती है, परिणामस्वरूप पौधों की जड़ों तथा शाखाओं का विकास अच्छी तरह से हो पाता है। पानी की हानि को रोकने के लिए पौधे के चारों ओर पलवार भी लगाई जा सकती है या पौधे के चारों तरफ गोलाकार रूप में ढँचा भी लगाया जा सकता है। जिससे ढँचा जल्दी बढ़कर पौधों को गर्मी में तेज धूप से बचाता है तथा वर्षा ऋतु आने पर ढँचा को मिट्टी में मिला देना चाहिए। इस तरह मृदा में कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्व भी मिल जाते हैं।

4. अंतः सस्य क्रियाएँ : बाग में खरपतवारों का प्रबंधन समयानुसार करना चाहिए। क्योंकि इससे ना सिर्फ पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है बल्कि इसकी वजह से बहुत सी कीट-व्याधियों का प्रकोप भी बढ़ जाता है। पौधों के थालों से खरपतवारों को हटाते समय अच्छी से गुड़ाई करना चाहिए। इससे मृदा में हवा का संचार उपयुक्त होता है, और जड़ों की वृद्धि होती है। सिंचाई की नालियों को समय-समय पर ठीक करना चाहिए।

5. कीट एवं व्याधियों का प्रबंधन : बाग स्थापना के प्रारंभ के वर्षों में सबसे अधिक समस्या दीमक की होती है। इसके लिए क्लोरोपायरीफास 5 मिली./लीटर पानी की दर से सिंचाई के पानी के साथ देनी चाहिए। पौधों में जब नए पत्ते आते हैं तब उनका रस चूसने वाले और कांटने वाले कीटों का प्रकोप बहुत हो जाता है, इनसे बचाव के लिए प्रणालीगत कीटनाशकों का उपयोग करना

चाहिए। फफूंदीजनित बीमारियों से बचाव के लिए बेविस्टीन का 0.1-0.2 % प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए। ध्यान रखें कि उकठा रोग (विल्ट) का या निमेटोड के प्रकोप का कोई लक्षण जैसे की पौधों का सूखना इत्यादि दिखे तो तुरंत उसका प्रबंधन करें।

6. पोषण प्रबंधन: शुरुआत के वर्षों में फलों के पौधों को आवश्यक पोषण देना अतिआवश्यक है जिससे वे आने वाले समय में फल देने के लिए तैयार हो सकें अपने बाग की मिटटी की जांच करवाकर ही उर्वरक का प्रबंधन करें।

7. पाले से बचाव : यदि क्षेत्र विशेष में पाले की समस्या अधिक है तो पौधों की सुरक्षा का प्रबंध पहले से करें। इसके लिए पॉलिथीन का उपयोग किया जाता है। पौधे के चारों तरफ तीन बांस की डंडिया लगायें। इसके पश्चात् पॉलिथीन को इस तरह से बांधें की पॉलिथीन का मुँह पूर्व दिशा की तरफ खुला रहे तथा उन्हें ऊपर रस्सी से बाँध दें एवं नीचे मिट्टी में दबा दें। इस तरह यह ढाँचा तिकोना आकर का हो जाएगा। सर्दियाँ समाप्त होने पर इसे हटा दें। यह प्रक्रिया उन सभी पौधों के साथ करें जो पाले से ज्यादा प्रभावित होते हैं।

8. अंतरासस्यन: अमरुद में केवल 2 वर्षों तक ही अंतरासस्यन करें और इस बात का विशेष ध्यान रखें कि किसी भी क्रिया से अमरुद की जड़ों या पौधे को कोई नुकसान न हो। ऐसी कोई फसल न लगाएं जिसमें फ्युसेरियम का प्रकोप होता हो। इनमें अंतरासस्यन करके बीच की खाली जगह को उपयोग किया जा सकता है और

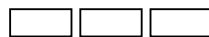
अतिरिक्त आमदनी भी ली जा सकती है। ध्यान सिर्फ इस बात का रखना होता है कि अंतरासस्यन में लगाई गई फसल से फलों के पौधों को किसी भी तरह का नुकसान ना होवें। फल वृक्षों के साथ सामान्यतः बरसीम, लुसर्न, लोबिया, मूंगफली, मूंग, कद्दू, टिंडा, प्याज, मटर, गाजर, फूलगोभी इत्यादि को अंतरासस्यन में लगाया जा सकता है। दलहनी फसलों को अंतरासस्यन में लगाने से ये फसलें नाइट्रोजन यौगिकीकरण द्वारा मृदा की उर्वरकता बढ़ती है। यँहा महत्वपूर्ण बात यह है कि सिंचाई, पोषण प्रबंधन, कीट-व्याधि इत्यादि को फलों तथा अंतरासस्यन में लगी फसल के लिए अलग-अलग करना चाहिए।

सावधानियां

1. ग्राफ्ट यूनियन पर लगी पोलिथीन को समय पर हटा दें।
2. जिन स्थानों पर दीमक की अधिक समस्या हो वहां पौधों को सहारा देने के लिए बांस के डंडों के स्थान पर प्लास्टिक के पाइपो का उपयोग करें।
3. इसके अलावा बाग के चारों तरफ बाड़ (फेंसिंग) लगाएं। वायु रोधक वृक्षों जैसे जंगल जलेबी, सहजन, शीशम इत्यादि लगाना उयुक्त होता है।
4. स्वयं बाग की देखभाल करें या किसी व्यक्ति को बाग की देखभाल के लिए बाग में रखें। जिससे बाग का प्रबंधन व्यवस्थित तरीके से किया जा सके।

तालिका 1: अमरुद के पौधों में खाद एवं उर्वरक की आवश्यकता

वृक्ष की आयु (वर्ष)	जून-जुलाई	अगस्त	अक्टूबर	दिसंबर-जनवरी
2	163 ग्रा. यूरिया 0.7-0.8 % बोरेक्स	0.7-0.8 % बोरेक्स	163 ग्रा. यूरिया	20 किग्रा. गोबर की खाद +283 ग्रा. डी.ए.पी. + 167 ग्रा. एस.ओ.पी.
3	326 ग्रा. यूरिया 0.7-0.8 % बोरेक्स	0.7-0.8 % बोरेक्स	326 ग्रा. यूरिया	30 किग्रा. गोबर की खाद +566 ग्रा. डी.ए.पी. +334 ग्रा. एस.ओ.पी.
4	489 ग्रा. यूरिया 0.7-0.8 % बोरेक्स	0.7-0.8 % बोरेक्स	489 ग्रा. यूरिया	40 किग्रा. गोबर की खाद +849 ग्रा. डी.ए.पी. + 501 ग्रा. एस.ओ. पी.
5	652 ग्रा. यूरिया 0.7-0.8 % बोरेक्स	0.7-0.8 % बोरेक्स	652 ग्रा. यूरिया	50 किग्रा. गोबर की खाद + 1132 ग्रा. डी.ए.पी. + 668 ग्रा. एस.ओ.पी.
6 वर्ष से अधिक	815 ग्रा. यूरिया 0.7-0.8 % बोरेक्स	0.7-0.8 % बोरेक्स	815 ग्रा. यूरिया	60 किग्रा. गोबर की खाद +1415 ग्रा. डी.ए.पी. +835 ग्रा. एस.ओ.पी.



अनार की उन्नत किस्में एवं बहार प्रबंधन से बड़ेगी किसानों की आय

¹संजय सिरोही, ²एन. वी. सिंह, ³सुरेश चंद राणा, एवं ⁴विजय सिंह जाटव

¹ फल एवं औद्योगिकी प्रौद्योगिकी संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

² भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, करनाल, हरियाणा

अनार (*Punica granatum* L.) लिथरेसी (Lythraceae) परिवार से सम्बंधित एक महत्वपूर्ण फलदार पौधा है। भारत में अनार मुख्य रूप से उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है, वर्ष 2024-25 के आंकड़ों के अनुसार, देश में अनार की खेती का कुल क्षेत्रफल लगभग 2,34,000 हेक्टेयर है। भारत में अनार की सबसे अधिक व्यावसायिक खेती महाराष्ट्र में होती है, जहाँ देश के कुल अनार उत्पादन की लगभग 45% पैदावार होती है। यहाँ की जलवायु व मिट्टी अनार की खेती के लिए उपयुक्त मानी जाती है।

अनार के फल मीठे और अम्लीय स्वाद वाले होते हैं, इसका गूदा रसदार होता है और यह अपच (डिस्पेप्सिया) जैसी पाचन समस्याओं में भी फायदेमंद साबित होता है। अनार के रस से एक प्रकार की शराब भी बनाई जाती है, जिसे अंगूर की शराब की तुलना में बेहतर माना जाता है। अनार एक ऐसा फल है जिसका खाने योग्य भाग (अरिल्स + बीज) फल के कुल भाग का लगभग 68 प्रतिशत होता है। अनार के बीजों से तेल निकाला जाता है और बीज तेल पोषक व जैव-सक्रिय यौगिकों से समृद्ध होता है, जिनमें फैटी एसिड, एंटीऑक्सीडेंट्स आदि शामिल होते हैं। इसके अलावा, अनार का छिलका (peel/rind) तथा बाकी अवशिष्ट भाग भी महत्वपूर्ण होते हैं – ये फिनोलीक्स यौगिक, फ्लवोनोयड्स, टैनिन आदि प्रदान करते हैं जिनका उपयोग न्यूत्रासूटीकल्स, कॉस्मेटिक्स, फार्मासूटीकल्स आदि में भी होता है।

राजस्थान, उत्तर प्रदेश, हरियाणा और पंजाब जैसे राज्यों में भी अनार की बागवानी का क्षेत्र तेजी से बढ़ रहा है। इन राज्यों में किसान अब पारंपरिक फसलों के साथ-साथ अनार की ओर भी रुख कर रहे हैं, जिससे उनकी आय में वृद्धि हो रही है।

जलवायु एवं मृदा उपयुक्तता

अनार का पौधा जलवायु की विभिन्न परिस्थितियों के प्रति अत्यंत अनुकूलन क्षमता रखता है फिर भी अनार की खेती के लिए सबसे उपयुक्त जलवायु अर्ध-शुष्क (semi-arid) क्षेत्र मानी जाती है, जहाँ ठंडी सर्दियाँ और गर्म ग्रीष्म ऋतु पाई जाती है। फल के विकास और पकने की अवधि में अनार के पौधों को गर्म और शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। उत्तम फल तथा मिठास युक्त फलों के लिए लगभग 38°C तापमान सबसे उपयुक्त माना जाता है।

अनार के फल बनने की प्रारंभिक अवस्था के दौरान यदि वातावरण में अधिक आर्द्रता (नमी) हो, तो अनार के फलों का रंग अच्छा नहीं बनता है, साथ ही, इस स्थिति में कीटों एवं रोगों का प्रकोप भी बढ़ जाता है, जिससे उत्पादन पर प्रतिकूल असर पड़ता है। अनार के लिए 25°C से 35°C के बीच का तापमान सबसे अनुकूल होता है। यह पौधा गर्मियों के दौरान 40°C तक का तापमान सहन कर सकता है। वर्षा की बात करें तो 800 से 900 मिलीमीटर वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र अनार की बागवानी के लिए उपयुक्त रहते हैं। यह पौधा सूखा सहनशील होता है। जहाँ तक मिट्टी की बात है, अनार विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है। फिर भी इसकी सर्वोत्तम खेती गहरी दोमट या जलोढ़ मिट्टी में की जाती है, जिसका पीएच मान लगभग 7.5 हो, इसके अलावा, यह पौधा मध्यम तथा हल्की काली मिट्टी में भी अच्छे परिणाम देता है।

पौधों की रोपाई: उत्तरी भारत में अनार की बागवानी के लिए, रोपाई से लगभग 1 माह पहले 60 × 60 × 60 सेमी का गड्ढा खोद लें उपरी मिट्टी के साथ लगभग 20 किग्रा गोबर खाद (FYM) व 1 किग्रा सिंगल सुपर फॉस्फेट मिलाकर गड्ढा भरें, और मिट्टी को स्थापित होने दें। रोपाई सामान्यतः वसंत (फरवरी-मार्च) या मानसून शुरू होते ही (जुलाई-अगस्त) करना उत्तम रहता है। पौधे के बीच 3 मीटर और कतार से कतार की दूरी 4.5 मीटर रखनी चाहिए जिससे प्रति हेक्टेयर में लगभग 740 पौधे लगाए जा सकते हैं।

उन्नत किस्में

सुपर भगवा (Super Bhagwa): यह अनार की एक उन्नत किस्म है जिसे महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी (MPKV) द्वारा विकसित किया गया। यह किस्म राजस्थान, पंजाब एवं उत्तर प्रदेश में बहुत लोकप्रिय है। कम आर्द्रता वाले शुष्क क्षेत्रों में बागवानी की लिए यह किस्म बहुत ही उपयुक्त पाई गई है। इसके फल बड़े आकार के होते हैं, जिनका वजन लगभग 250 से 300 ग्राम तक होता है। फल का छिलका गहरे केसरिया रंग का होता है, इसके दाने (अरिल्स) गहरे लाल रंग के, आकर्षक और स्वाद में मीठे होते हैं। बीज नरम होते हैं और फल लगभग 176 दिनों में पककर तैयार हो जाता है।

भगवा (Bhagwa): अनार की इस किस्म को महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी (MPKV) द्वारा विकसित किया गया है। यह किस्म हल्की से मध्यम प्रकार की मिट्टी और कम आर्द्रता वाले सूखे मौसम

के लिए उपयुक्त मानी जाती है। इसके फल बड़े आकार के होते हैं, जिनका वजन औसतन 400 से 420 ग्राम तक होता है। फल की सतह चमकदार और छिलका सुंदर केसरिया रंग का होता है, बीज नरम होते हैं और फल 180 से 190 दिनों में पककर तैयार हो जाते हैं। इस किस्म से प्रति हेक्टेयर 22.50 टन तक उपज ली जा सकती है। यह किस्म निर्यात और घरेलू बाजार दोनों के लिए उपयुक्त है।

सोलापुर लाल (Solapur Lal):

सोलापुर लाल अनार की एक बेहतरीन किस्म है, जिसे आईसीएआर - राष्ट्रीय अनार अनुसंधान केंद्र, सोलापुर (महाराष्ट्र) ने तैयार किया है। इस किस्म को बायोफोर्टिफाइड अनार कहा जाता है, क्योंकि इसके फलों में विटामिन C, लोहा (Iron), जिंक और एंथोसाइनिन जैसे पोषक तत्व ज्यादा मात्रा में पाए जाते हैं। यह किस्म भगवा से 15-20 दिन पहले पक जाती है, जिससे जल्दी बाजार में भेजकर अच्छे दाम मिल सकते हैं। एक पेड़ से औसतन 35 से 40 किलो तक फल मिलते हैं। इसके फल थोड़े छोटे होते हैं लेकिन दाने और छिलका गहरे लाल रंग के होते हैं, जो बाजार में ज्यादा पसंद किए जाते हैं।

सोलापुर अनारदाना (Solapur Anardana): अनार की इस किस्म को ICAR-राष्ट्रीय अनार अनुसंधान केंद्र (NRCP), सोलापुर द्वारा विकसित किया गया है। यह किस्म खासतौर पर अनारदाना, जूस, सिरका और अन्य मूल्य संवर्धित उत्पादों के निर्माण के लिए उपयुक्त मानी जाती है। इसका विकास गणेश, नाना, दारु और भगवा किस्मों के संकरण से किया गया है, इस किस्म की खेती शुष्क और अर्ध-शुष्क जलवायु में आसानी से की जा सकती है और कम नमी वाली परिस्थितियों में भी अच्छी उपज देने में सक्षम है। इसके फलों में अम्लता अधिक होती है, जो अनारदाना बनाने के लिए आवश्यक होता है।

गणेश (Ganesh): यह किस्म महाराष्ट्र में व्यावसायिक रूप से उगाई जाती है। पौधों की शाखाएं फैलावदार होती हैं। महाराष्ट्र की जलवायु में इसकी फसल की अवधि लगभग 140-150 दिनों की होती है। हर फल का वजन करीब 250 ग्राम होता है। फल गोल और चिकना होता है, इसका छिलका गुलाबी पीला से लेकर लाल पीले रंग का होता है। फल के दाने हल्के गुलाबी रंग के होते हैं। अनार के 6 से 7 वर्ष आयु के उद्यान से 12 टन प्रति हेक्टेयर तक पैदावार मिल जाती है।

फुले अर्क्ता (Phule Arakta): यह अनार की एक प्रमुख और उन्नत किस्म है, जिसे महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी (MPKV) ने विकसित किया है। फल गोल, चिकने और चमकदार होते हैं, जिनका रंग गहरा लाल होता है। इसके दाने भी गहरे लाल रंग के, स्वाद में भी अच्छे होते हैं। इसके पौधे फैलने वाले और सदाबहार होते हैं। और बीज नरम होते हैं। औसतन एक फल का वजन 182.70 ग्राम होता है और 80 से 90 फल प्रति पेड़ मिलते हैं, यह किस्म

अपने बेहतर रंग, स्वाद और जूस मात्रा के कारण निर्यात और घरेलू बाजार, दोनों के लिए उपयुक्त मानी जाती है।

मृदुला (Mridula): यह भी अनार की एक उन्नत किस्म है जिसे महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी द्वारा विकसित किया गया है। इसमें नर, उभयलिंगी तथा मध्यवर्ती प्रकार के फूल आते हैं और वर्ष की तीनों ऋतुओं में पुष्पन होता है। फल आकार में मध्यम (300-350 ग्राम) होते हैं, जिनका छिलका लालिमा लिए भूरा होता है। दाने गहरे लाल रंग के, नरम तथा मीठे स्वाद वाले होते हैं। इसकी औसत उत्पादकता 10.62 टन प्रति हेक्टेयर है।

भारत एवं विश्व स्तर पर विकसित अनार की किस्में:

1. विशाल (CAZRI Vishal):
2. सीओ-1 (CO-1)
2. जी-137 (G-137)
3. पी-23 (P-23)
4. पी-26 (P-26)
5. मृदुला (Mridula)
6. फुले अनारदाना (Phule Anardana)- अनार दाना योग्य किस्म
8. जालौर सीडलेस (Jalore Seedless)
9. ज्योति / जीकेवीके-1 (Jyoti / GKVK-1)
10. रूबी (Ruby)
12. अमलीदाना (Amlidana) - अनार दाना योग्य किस्म
13. गोमा खट्टा (Goma Khatta)
14. रेड सिल्क (Red Silk)
15. अनार नाना (Pomegranate Nana) - सजावट योग्य किस्म
16. कंधारी (Kandhari)
17. स्पेनिश रूबी (Spanish Ruby)
18. डोलका (Dholka)
19. पेपर शेल्ड (Paper Shelled)
20. मस्कट रेड (Muscat Red)
21. जोधपुर रेड / स्थानीय (Jodhpur Red / Local)
22. वंडरफुल
23. ग्रेनेडा
24. मोलर -डी -इचे
25. मालस ई सावेह

सिंचाई: अनार के पौधों की वृद्धि और अच्छे उत्पादन के लिए नियमित सिंचाई आवश्यक होती है। गर्मियों के मौसम में प्रत्येक सप्ताह और सर्दियों में लगभग 15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। अतिरिक्त पानी को खेत से निकाल देना चाहिए ताकि जलभराव न हो।

फल आने की अवस्था में नियमित अंतराल पर सिंचाई करना बहुत जरूरी है, अन्यथा फलों के फटने की समस्या हो सकती है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली अपनाने से फलों की गुणवत्ता और उत्पादन दोनों में वृद्धि होती है, क्योंकि अन्य सिंचाई विधियों में जिस दिन सिंचाई की जाती है उस दिन पौधों को अत्यधिक पानी मिलता है, जबकि अगली सिंचाई तक नमी की कमी हो जाती है, जो अनार के पौधों की वृद्धि और फलों के विकास के लिए आदर्श स्थिति नहीं है।

अनार के पौधे में सहारा देना (Staking): अनार के छोटे पौधों को सीधा रखने के लिए सहारे की आवश्यकता होती है। फूल (बौर) आने की अवस्था में ही पौधों के पास मिट्टी चढ़ाने का कार्य पूरा कर लेना चाहिए, ताकि जड़ें ठकी रहें और पौधे मजबूत बने रहें। जब पौधे फल देना शुरू करते हैं, तब शाखाओं पर फलों का वजन अधिक हो जाता है। ऐसे समय में पौधों को बांस अथवा लकड़ी के मजबूत डंडे से सहारा देना बहुत आवश्यक होता है।

बहार नियंत्रण (Crop regulation): अनार में फूल आने के तीन मुख्य मौसम होते हैं—जून-जुलाई में मृग बहार, फरवरी-मार्च में अम्बे बहार तथा सितंबर-अक्टूबर में हस्त बहार। सामान्यतः अनार के पौधे किसी भी बहार में फल दे सकते हैं, परंतु एक वर्ष में केवल एक ही बहार लेना उपयुक्त माना जाता है। बहार का चयन बाजार की मांग, भाव, पानी की उपलब्धता एवं मौसम की अनुकूलता को ध्यान में रखकर किया जाता है, जिससे गुणवत्तापूर्ण उत्पादन प्राप्त हो।

अनार में फसल नियमन, जिसे बहार उपचार भी कहा जाता है, एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा आराम की अवधि देकर फल की गुणवत्ता और उपज को बेहतर बनाने के लिए पुष्पन चक्र को नियंत्रित किया जाता है। सबसे आसान विधि में एक से दो महीने तक सिंचाई रोकना, उसके बाद छंटाई करना। रासायनिक विधि में एथरेल जैसे पादप वृद्धि नियामकों का उपयोग किया जाता है, जो अनार में फूल आने की प्रेरणा, पुष्प संरचना तथा फूल झड़ने को नियंत्रित कर उत्कृष्ट फलन प्राप्त करने में सहायता करते हैं। इसके बाद खाद-उर्वरक देने के पश्चात हल्की-सिंचाई की जाती है, और इसके बाद नियमित रूप से भारी सिंचाई दी जाती है, जिससे पौधों में नई कोपलें और पुष्प निकलते हैं तथा अंततः भरपूर और उत्तम गुणवत्ता वाला उत्पादन मिलता है।

फलों का फटना (Fruit cracking): अनार में फल फटना एक गंभीर समस्या है, जो अनार की पैदावार और गुणवत्ता दोनों को प्रभावित करती है। नये फलों में यह बोरॉन (Boron) की कमी के कारण हो सकता है। परिपक्व फलों में यह ज्यादातर मिट्टी या वायुमंडलीय नमी व तापमान में असंतुलन होने से होता है। लंबे समय तक सूखा रहने के बाद अचानक भारी सिंचाई या बारिश या पर्यावरणीय तनाव भी फल के बाहरी छिलके (rind) को कमजोर बना सकते हैं, जिससे फल फटने की संभावना बढ़ जाती है। फल फटने की समस्या को नियंत्रित करने के लिए नियमित और

नियंत्रित जल व्यवस्था, जैसे कि ड्रिप सिंचाई विधि अत्यंत प्रभावी है। इससे मिट्टी में नमी संतुलित रहती है और अचानक नमी में उतार चढ़ाव नहीं आते; साथ ही, मिट्टी और पत्तियों में कैल्शियम, बोरॉन और अन्य सूक्ष्मपोषक तत्वों को प्रदान करके पौधों में पोषण का सही प्रबंधन कर फल फटने की समस्या को कम किया जा सकता है।

फलों की बैगिंग: अनार में फल भेदक से बचाव के लिए फलों को पेपर, पॉलीथिन या अन्य उपयुक्त सामग्री के बैग से ढक देना चाहिए। बैगिंग से फल साफ-सुथरे, चमकदार और उच्च गुणवत्ता वाले बनते हैं। इससे कीटनाशक का खर्च भी बचता है और बाजार में अच्छे दाम मिलते हैं।

थ्रिप्स (Thrips): यह एक रस-चूसने वाला कीट है जो पौधों को कमजोर कर देता है और कली, फूल तथा छोटे फल झड़ जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड (Imidacloprid) कीटनाशक का उपयोग सबसे प्रभावी रहता है। 1 मिली इमिडाक्लोप्रिड को 3 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से थ्रिप्स का नियंत्रण हो जाता है।

एन्थाक्नोस: यह रोग आर्द्र हवा व 20-27 °C तापमान में तेजी से फैलता है। प्रभावित पत्तियों, फूलों, तनों व फलों पर पहले छोटे-छोटे भूरे या काले धब्बे दिखने लगते हैं, जिनके केंद्र अक्सर धंसे (sunken) होते हैं। जैसे-जैसे रोग बढ़ता है, ये धब्बे बढ़कर अनियमित आकार के हो जाते हैं। कार्बेन्डाजिम या डिफेनकोनाज़ोल @ 0.20-0.30 % कवकनाशी के स्प्रै से फसल को बचाया जा सकता है।

सर्कोस्पोरा लीफ स्पॉट: इस रोग के लक्षण अनार की पत्तियों, फलों और टहनियों में दिखाई देता है। प्रारम्भ में पत्तियों पर ज़मीनीभूरे, कथई छोटे धब्बे बन जाते हैं, इस के नियंत्रण के लिए कार्बेन्डाजिम, प्रोपिकोनाज़ोल या हेक्साकोनाज़ोल का छिड़काव 2 g प्रति लीटर पानी में मिला कर करे।

फल सड़न रोग (Fruit Rot): यह रोग फलों पर छोटे-छोटे लालिमा लिए भूरा-काला (reddishbrown / brownblack) गोलाकार धब्बों से शुरू होता है; जैसे-जैसे संक्रमण बढ़ता है, ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े चकत्तों में बदल जाते हैं और फल धीरे-धीरे सड़ने लगते हैं। नियंत्रण हेतु, जब रोग दिखे, तब 0.25% की दर से Mancozeb दवा का छिड़काव करना प्रभावी रहता है।

बैक्टीरियल ब्लाइट (Bacterial Blight): इस रोग में सबसे पहले पत्तियों पर छोटे-छोटे अनियमित धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में ये धब्बे हल्के भूरे से गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं यह रोग तनों पर भी फैल जाता है। अनार के पौधे के सभी भाग जैसे पत्तियाँ, गांठें, फूल और फल इससे प्रभावित होते हैं, जिससे 60-70 प्रतिशत तक उपज का नुकसान हो सकता है। इस रोग को नियंत्रित करने के लिए पॉशामायसिन 0.05 % में कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 % मिला कर 15 दिन के अंतराल पर तीन छिड़काव करना चाहिए।

प्याज के बीज उत्पादन की उन्नत तकनीकियां

सबीना इस्लाम एवं दिव्या आरती

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

प्याज भारत देश में सबसे अधिक उगाई और खाई जाने वाली सब्जियों में से एक है। इसे कई रूपों में खाया जाता है, सलाद के रूप में तज़ा खाया जाता है, और सब्जी के रूप में पकाया जाता है तथा मसाले के रूप में इस्तेमाल किया जाता है, और इसे संसाधित, अचार एवं निर्जलीकरण भी किया जाता है। प्याज फाइटोकेमिकल उपलब्धता से भरपूर होती है, जैसे कि एलिसिन और डायलिल डाइसल्फ़ाइड जैसे सल्फर युक्त यौगिक, तथा प्रोबायोटिक यौगिक 'फ़्रक्टैन', जिसके कारण इसे 'कार्यात्मक भोजन' कहा जाता है। यह फसल पारंपरिक चिकित्सा में सदियों से उपयोग की जाती रही है, और वैज्ञानिक शोधों ने इसके औषधीय गुणों को प्रमाणित किया है।

अपने खास स्वाद और उपयोगिता की वजह से प्याज की मांग पूरे साल बनी रहती है। साथ ही, इसके सेहत से जुड़े फायदों (न्यूट्रास्यूटिकल्स) के बारे में बढ़ती जागरूकता के कारण भी इसकी मांग बढ़ रही है। प्याज के सेवन से कई तरह के स्वास्थ्य लाभ जुड़े हुए हैं जिनमें कैंसररोधी गुण, एंटीप्लेटलेट गतिविधि, एंटीथ्रोम्बोटिक गतिविधि, अस्थमारोधी और एंटीबायोटिक प्रभाव शामिल हैं। वर्ष 2023-24 के दौरान भारत ने 1.54 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र से 24.26 मिलियन टन प्याज का उत्पादन किया, जिससे यह चीन के बाद दुनिया में दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक बन गया, और वैश्विक प्याज उत्पादन में लगभग 14% का योगदान दिया। हालांकि, भारत में प्याज की उत्पादकता केवल 15.75 टन/हेक्टेयर है, जो उन्नत किस्मों की संभावित उपज क्षमता (25.0-35.0 टन/हेक्टेयर) की तुलना में काफी कम है।

किसान अक्सर कम पैदावार की समस्या झेलते हैं, जिसका मुख्य कारण कम उपज देने वाली किस्मों की खेती है। इसकी वजह उच्च उपज वाली किस्मों के बीजों की कमी और गलत खेती के तरीके हैं। प्याज एक पर-परागण वाली फसल है, और इसके बीज सिर्फ एक साल तक उपयोगी रहते हैं, इसलिए हर साल नए बीज तैयार करना जरूरी होता है। प्याज का बीज उत्पादन एक खास प्रक्रिया है, जिसके लिए कुछ जरूरी बातों का ध्यान रखना जरूरी है।

क्षेत्र का चयन: बीज उत्पादन के लिए सही क्षेत्र चुनना बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह आनुवंशिक शुद्धता एवं भौतिक शुद्धता के साथ-साथ बीज जनित रोगजनकों को भी निर्धारित करता है। जिस खेत में प्याज के बीज उगाने हैं, वहां पिछले साल कोई दूसरी किस्म

नहीं उगाई जानी चाहिए। साथ ही, खेत में कोई पुराने प्याज के पौधे या खरपतवार नहीं होने चाहिए।

अलगाव दूरी: प्याज एक पर-परागण वाली फसल है, जिसमें मधुमक्खियां और अन्य कीट परागण का काम करते हैं। दूसरी किस्मों से पर-परागण को रोकने और बीज की शुद्धता बनाए रखने के लिए पर्याप्त दूरी रखना जरूरी है। आधार बीज (फाउंडेशन) के लिए 1000 मीटर और प्रमाणित बीज (सर्टिफाइड) के लिए 500 मीटर की दूरी रखनी चाहिए, ताकि बीज उत्पादन क्षेत्र प्याज की अन्य किस्मों से अलग रहे।

जलवायु और मिट्टी: भारत के मैदानी क्षेत्रों में, ज्यादातर छोटे दिन या मध्यम दिन की अवधि वाली प्याज की किस्में उगाई जाती हैं। बीज उत्पादन के लिए इन्हें ठंडे मौसम की जरूरत होती है, खासकर जब बीज डंठल विकसित हो रहा होता है। प्याज की किस्में 10-15°C के औसत तापमान पर अच्छे से बढ़ती हैं। बीज पकने, कटाई और सुखाने के समय गर्म और सूखी जलवायु होना जरूरी है, ताकि बीज अच्छी तरह तैयार हो सके।

बीज उत्पादन के लिए उपजाऊ, अच्छी तरह से सूखी हुई और उपयुक्त पीएच 6.0-6.8 वाली दोमट या बलुई दोमट मिट्टी सबसे अच्छी मानी जाती है, क्योंकि यह बल्ब के विकास में कोई बाधा नहीं डालती। प्याज की जड़ें उथली होती हैं और मिट्टी की ऊपरी 10-15 सेमी पर ही बढ़ती हैं। इसलिए, मिट्टी को कीटों और बीमारियों से मुक्त होना चाहिए।

बीज उत्पादन विधि:

बल्ब से बीज उत्पादन विधि (दो वर्ष में): इस विधि का उपयोग मुख्य रूप से आधार (फाउंडेशन) बीज उत्पादन के लिए किया जाता है। प्याज में बीज उत्पादन के लिए यह प्रक्रिया दो साल में पूरी होती है।

मौसम की स्थिति के अनुसार, नर्सरी अक्टूबर के अंत से नवंबर की शुरुआत तक तैयार की जाती है। पौधे 55-60 दिनों में रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं और पाला खत्म होते ही उनकी रोपाई कर दी जाती है। जब प्याज की 75% पत्तियां सूखकर झुक जाती हैं (अप्रैल-जून के पहले सप्ताह तक), तब बल्ब कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। बल्बों को छायादार स्थान में सुखाया जाता है ताकि उनकी बाहरी परत सख्त हो सके। अच्छी गुणवत्ता वाले बल्बों का चयन उनके आकार, रंग अन्य विशेषताओं के आधार पर

किया जाता है। इन्हें 25-35 °C तापमान पर प्लास्टिक के बक्सों, बेंट की टोकरियों या लकड़ी/बांस के टैक में अच्छे वेंटिलेशन के साथ संग्रहित किया जाता है। समय-समय पर खराब, संक्रमित या अंकुरित बल्बों को हटा देना चाहिए।

बल्बों को अक्टूबर के दूसरे पखवाड़े के दौरान 60 सेमी × 45 सेमी की दूरी पर लगाया जाता है। रोपाईं से पहले, बल्बों को काटकर उनकी आंतरिक संरचना देखी जा सकती है। इन्हें -30 60 मिनट तक कीटनाशक और फफूंदनाशक घोल में डुबोकर बीमारियों से बचाया जाता है। 15-10 दिनों में पत्तियां बढ़ने लगती हैं, और फरवरी के मध्य से फूलों के डंठल निकलते हैं, जिनकी संख्या प्रति पौधा 8-6 होती है। फूल खिलने के दौरान उचित परागण आवश्यक होता है, जिसे छत्र (फूल गुच्छे) हिलाकर किया जा सकता है, क्योंकि प्याज के फूल प्राकृतिक रूप से प्रोटैंड्रस होते हैं। इसके अलावा, मधुमक्खियों के छत्ते रखकर भी परागण बढ़ाया जा सकता है। बीज पकने से पहले छत्रों (फूल गुच्छों) को काट लिया जाता है, जिससे बीज झड़ने न पाए। कटाई के बाद छत्रों को खुली धूप में सुखाया जाता है ताकि बीज आसानी से निकाले जा सकें। इस विधि में बीज की पैदावार अधिक होती है क्योंकि प्रति बल्ब 8-6 फूल वाले डंठल निकलते हैं, जबकि "बीज से बीज" विधि में केवल 4-1 डंठल होते हैं।

बल्ब से बीज उत्पादन विधि (एक वर्ष में): इस विधि में केवल एक वर्ष में बीज तैयार हो जाता है और इसे खरीफ प्याज की किस्मों के बीज उत्पादन के लिए इस्तेमाल किया जाता है। जून में नर्सरी में बीज बोए जाते हैं, अगस्त में पौधे रोपे जाते हैं तथा नवंबर-दिसंबर के पहले पखवाड़े में बल्ब तैयार हो जाते हैं। बल्बों की कटाई के बाद उनके आकार और रंग के आधार पर चुना जाता है। जब एक फूल गुच्छे (छत्र) में 75-80% बीज पक जाते हैं, तो उन्हें काट लिया जाता है, जिससे 5.0-7.5 सेमी डंठल बचा रहता है। कटाई के बाद, बीज की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए छत्रों को धूप में सुखाया जाता है।

बल्ब चयन और रोपण: मध्यम आकार के बल्बों को रोपण के लिए चुना जाता है। एक हेक्टेयर में रोपण के लिए लगभग 20-25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर बल्ब की आवश्यकता होती है। रोपाईं के लिए 60 × 45 सेमी (पंक्ति से पंक्ति × बल्ब से बल्ब) की दूरी रखी जाती है। रोपण से पहले सड़े हुए, रोगग्रस्त और अंकुरित बल्बों को हटा देना जरूरी होता है।

विभिन्न संस्थानों द्वारा जारी प्याज की किस्मों इस प्रकार हैं:

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (IARI), नई दिल्ली:

पूसा ऋद्धि: इस किस्म के बल्ब कॉम्पैक्ट, चपटे गोल और गहरे लाल रंग के होते हैं। औसत एक बल्ब का वजन 70.0 - 100.0 ग्राम तक होता है। यह किस्म भंडारण और निर्यात के लिए उपयुक्त है। औसत उपज 31.66 टन/हेक्टेयर है। यह किस्म रबी की फसल के लिए उपयुक्त है।

पूसा सोना: इस किस्म के बल्ब कॉम्पैक्ट और क्रीमिश पीले रंग के होते हैं। औसत एक बल्ब का वजन 70.0-135.0 ग्राम तक होता है, और उपज क्षमता 33.0-35.0 टन/हेक्टेयर होती है। रोपाईं के 125-135 दिनों के बाद बल्ब कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। इसके बल्ब बड़े आकार के और कम तीखे तथा यूरोप-अमेरिका को निर्यात के लिए उपयुक्त होते हैं।

पूसा शोभा: बल्ब कॉम्पैक्ट, चपटे ग्लोब और भूरे रंग के होते हैं। औसत बल्ब का वजन 70.0 - 100.0 ग्राम तक होता है। बल्ब में उच्च टीएसएस (17.0 ± 2 ब्रिक्स) होता है। यह किस्म भंडारण, सुखाने, प्रसंस्करण और निर्यात के लिए उपयुक्त है। औसत उपज 25.04 टन/हेक्टेयर है।

पूसा रेड: औसत बल्ब का वजन 70.0-90.0 ग्राम, गोलाकार होती है। रोपाईं के 125 - 140 दिन बाद परिपक्व होता है और बल्ब की उपज 25.0 -30.0 टन/हेक्टेयर है।

पूसा माधवी: पूसा माधवी के बल्ब मध्यम से बड़े, भूरे लाल रंग के होती है। रोपाईं के 130-135 दिन बाद परिपक्व होता है और यह किस्म रबी मौसम के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की रखने की गुणवत्ता अच्छी है तथा इसकी उपज 30.0 टन/हेक्टेयर है।

पूसा व्हाइट राउंड: बल्ब मध्यम से बड़े, आकर्षक गोल आकार, और यह हरे प्याज के उत्पादन के लिए उपयुक्त है। देर खरीफ (late khariif) और रबी मौसम के लिए उपयुक्त है। 125-130 दिनों में परिपक्व और उपज क्षमता 28.0 -30.0 टन/हेक्टेयर बल्ब है।

पूसा व्हाइट प्लैट: बल्ब मध्यम से बड़े, और हरे प्याज के उत्पादन के लिए उपयुक्त है। देर खरीफ (late khariif) और रबी मौसम के लिए उपयुक्त है तथा 120-130 दिनों में परिपक्व होता है। बल्ब की उपज 25.0-30.0 टन/हेक्टेयर है।

प्याज और लहसुन अनुसंधान निदेशालय (DOGAR), पुणे, महाराष्ट्र:

भीमा डार्क रेड: छत्तीसगढ़, दिल्ली, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान और तमिलनाडु में खरीफ मौसम में उगाने के लिए उपयुक्त है। बल्ब आकर्षक गहरे लाल रंग के होते हैं। रोपाईं के 95-100 दिनों के बाद फसल पक जाती है और उपज क्षमता 20.0 -22.0 टन/हेक्टेयर है।

भीमा राज: महाराष्ट्र, कर्नाटक और गुजरात राज्यों में खरीफ और देर खरीफ मौसम के लिए उपयुक्त है। यह किस्म रोपाईं के 120-125 दिनों के भीतर पक जाती है और औसत उपज 25.0-30.0 टन/हेक्टेयर होती है।

भीमा रेड: महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में रबी मौसम के लिए और दिल्ली, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, महाराष्ट्र, पंजाब, राजस्थान और तमिलनाडु में खरीफ मौसम के लिए उपयुक्त है। इसे खरीफ के आखिर में भी उगाया जा सकता है। खरीफ के दौरान रोपाईं के 105-

110 दिनों के बाद और देर खरीफ, रबी में रोपाई के 110-120 दिनों के बाद परिपक्वता आती है। खरीफ मौसम में औसत उपज 19.0-21.0 टन/हेक्टेयर, देर खरीफ मौसम में 48.0-52.0 टन/हेक्टेयर और रबी मौसम में 30.0-32.0 टन/हेक्टेयर होती है।

भीमा सुपर: छत्तीसगढ़, दिल्ली, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान और तमिलनाडु में खरीफ सीजन के लिए उपयुक्त है। इसे देर खरीफ मौसम में भी उगाया जा सकता है। खरीफ में इसकी औसत उपज 20.0-22.0 टन/हेक्टेयर और देर खरीफ मौसम में 40.0-45.0 टन/हेक्टेयर है। खरीफ में रोपाई के बाद 100-105 दिनों के भीतर और देर खरीफ मौसम में 110-120 दिन में बल्ब तैयार हो जाते हैं।

भीमा किरण: महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, दिल्ली, यूपी, हरियाणा, बिहार और पंजाब राज्यों में रबी मौसम के लिए उपयुक्त है। यह किस्म रोपाई के 130 दिनों के बाद परिपक्व हो जाती है और औसत विपणन योग्य उपज 41.5 टन/हेक्टेयर तक होती है। इस किस्म का भंडारण 5-6 महीने तक है।

भीमा शक्ति: महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, बिहार, पंजाब, राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और उड़ीसा के लिए देर खरीफ मौसम और रबी मौसम के लिए उपयुक्त है। रोपाई के बाद 130 दिनों में बल्ब पक जाते हैं। देर खरीफ मौसम के दौरान विपणन योग्य उपज 45.9 टन/हेक्टेयर और रबी के दौरान 42.7 टन/हेक्टेयर है। इस किस्म का भंडारण 5-6 महीने तक रहता है।

भीमा श्वेता: यह सफेद छिलके वाली किस्म, छत्तीसगढ़, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, राजस्थान और तमिलनाडु में रबी और खरीफ मौसम के लिए उपयुक्त है। यह 110-120 दिनों में पक जाती है। इसे 3 महीने तक संग्रहीत किया जा सकता है। खरीफ मौसम के दौरान औसत विपणन योग्य उपज 18-20 t/ha है और रबी में 26-30 t/ha है।

भीमा शुभा: सफेद छिलके वाली किस्म, महाराष्ट्र में खरीफ और देर खरीफ मौसम दोनों के लिए उपयुक्त है, और छत्तीसगढ़, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, राजस्थान और तमिलनाडु में केवल खरीफ मौसम के लिए उपयुक्त है। यह खरीफ के दौरान 110-115 दिन में तैयार और देर खरीफ में 120-130 दिन में तैयार होती है। खरीफ के दौरान औसत उपज 18.0-20.0 टन/हेक्टेयर और खरीफ के अंत में 36.0-42.0 टन/हेक्टेयर है।

भीमा सफ़ेद: सफ़ेद छिलके वाली किस्म, छत्तीसगढ़, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान और तमिलनाडु में रबी मौसम में खेती के लिए उपयुक्त है। यह एक मध्यम पकने वाली (110-120 दिन) किस्म है जिसमें मुख्य रूप से 70-80 ग्राम के सफ़ेद, गोल से लेकर अंडाकार बल्ब होते हैं। इसमें 5% से कम डबल और बोल्टर हैं।

भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान (IIHR), बैंगलोर:

अर्का भीम: बल्ब का रंग लाल से गुलाबी लाल होता है। फसल 130 दिनों में पक जाती है और उपज क्षमता 47.0 टन/हेक्टेयर है।

अर्का सोना: यह पीले रंग की किस्म है, जो 120 दिनों में पक जाती है और इसकी उपज क्षमता 45.0 टन/हेक्टेयर है।

अर्का स्वादिस्ता: यह सफेद रंग की किस्म है। इसकी उपज क्षमता 30.0 टन/हेक्टेयर है।

अर्का लालिमा: यह प्याज की संकर किस्म है। यह खरीफ और रबी दोनों मौसमों के लिए उपयुक्त है। इसके बल्ब मध्यम से बड़े आकार के होते हैं और इसकी उपज क्षमता 47.0 टन/हेक्टेयर है।

अर्का कीर्तिमान: यह भी प्याज की संकर किस्म है, जिसके बल्ब बड़े आकार के होते हैं। इसकी उपज क्षमता 47.0 टन/हेक्टेयर है।

अर्का पीताम्बर: यह पीले रंग की किस्म है, जो निर्यात के लिए उपयुक्त है। इसके बल्ब मध्यम आकार के होते हैं और इनका संग्रहीत क्षमता भी अच्छी होता है।

अर्का प्रगति: इसके बल्ब मध्यम आकार के और तीखे होते हैं। इसकी औसत उपज क्षमता 35.0 टन/हेक्टेयर है।

अर्का निकेतन: इसके बल्ब हल्के लाल रंग के और तीखे होते हैं। औसत उपज क्षमता 34.0-37.0 टन/हेक्टेयर है। यह किस्म अच्छी तरह से संग्रहीत होती है।

अर्का कल्याण: बल्ब का रंग आकर्षक लाल है, औसत उपज क्षमता 40.0 टन/हेक्टेयर है।

राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान और विकास प्रतिष्ठान, (एनएचआरडीएफ), नासिक:

एग्रीफाउंड डार्क रेड: यह किस्म खरीफ मौसम में उगाने के लिए उपयुक्त है। बल्ब आकर्षक गहरे लाल रंग के होते हैं और रोपाई के 95-110 दिनों के बाद पक जाते हैं। औसत उपज क्षमता 30.0 टन/हेक्टेयर है।

एग्रीफाउंड लाइट रेड: यह किस्म रबी मौसम के लिए उपयुक्त है। बल्ब हल्के लाल रंग के होते हैं और रोपाई के 110-120 दिनों के बाद तैयार हो जाते हैं। औसत उपज क्षमता 30.0 -35.0 टन/हेक्टेयर है।

एनएचआरडीएफ रेड (लाइन 28): यह किस्म रबी मौसम के लिए उपयुक्त है। बल्ब आकर्षक गहरे लाल रंग के होते हैं, रोपाई के 110-120 दिनों के बाद पक जाते हैं और अच्छी तरह से संग्रहीत होते हैं। उपज क्षमता 25.0-30.0 टन/हेक्टेयर है।

एनएचआरडीएफ रेड-2 (लाइन 355): यह किस्म रबी मौसम के लिए उपयुक्त है। बल्ब लाल रंग के होते हैं, रोपाई के 110-120 दिनों में पक जाते हैं और अच्छी तरह से संग्रहीत होते हैं। औसत उपज 35.0-37.5 टन/हेक्टेयर है।

एनएचआरडीएफ रेड-3: यह किस्म रबी मौसम के लिए उपयुक्त है। फसल रोपाई के 120-130 दिनों में पक जाती है और अच्छी तरह से संग्रहीत होती है। औसत उपज 35.0-40.0 टन/हेक्टेयर है।

एनएचआरडीएफ रेड-4: यह किस्म रबी मौसम के लिए उपयुक्त है। बल्ब गहरे लाल रंग के होते हैं और रोपाई के 110-120 दिनों में पक जाते हैं और अच्छी तरह से संग्रहीत होते हैं। औसत उपज 35.0-40.0 टन/हेक्टेयर है।

एग्रीफाउंड व्हाइट: यह किस्म देर खरीफ और रबी मौसम के लिए उपयुक्त है। बल्ब सफेद रंग के होते हैं और रोपाई के 110-130 दिनों के बाद पक जाते हैं। औसत उपज 25.0-30.0 टन/हेक्टेयर है। यह किस्म निर्जलीकरण के लिए उपयुक्त है।

फसल की देखभाल:

पोषण (खाद और उर्वरक): बुवाई से पहले, फसल की अच्छी वृद्धि के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की एक प्रारंभिक खुराक दी जाती है। इसमें 20-25 टन/हेक्टेयर अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद मिलाई जाती है, जिससे मिट्टी की संरचना और सूक्ष्मजीव गतिविधि में सुधार होता है। इसके अलावा, 100-120 किग्रा/हेक्टेयर नाइट्रोजन, 60-80 किग्रा/हेक्टेयर फॉस्फोरस और 40-60 किग्रा/हेक्टेयर पोटाश मिट्टी में मिलाया जाता है। बुवाई के बाद, फसल की बढ़ती पोषक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए टॉप ड्रेसिंग की जाती है। इसमें 40-50 किग्रा/हेक्टेयर नाइट्रोजन को 30 और 45 दिन बाद दो भागों में दिया जाता है, जिससे फसल का सही विकास और बीज उत्पादन अच्छा हो सके।

सिंचाई प्रबंधन: बल्ब बनने, बीज डंठल बढ़ने और बीज पकने के दौरान मिट्टी में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। इस समय पानी की कमी बल्ब की गुणवत्ता और बीज की उपज पर बुरा प्रभाव डालती है। जब बीज और बल्ब पूरी तरह पक जाएं, तब सिंचाई न करें।

खरपतवार प्रबंधन: प्याज की फसल में खरपतवार का बहुत अधिक प्रकोप होता है। रोपाई के तुरंत बाद स्टॉम्प @ 3.0 लीटर/हेक्टेयर का छिड़काव करें। साथ ही, 4-3 बार हाथ से निराई करने से खरपतवार को अच्छी तरह नियंत्रित किया जा सकता है।

पौधों की सुरक्षा: प्याज की फसल पर अलग-अलग मौसम में कई कीट और बीमारियों का प्रकोप होता है। अगर इन्हें समय पर नहीं रोका जाए, तो फसल को भारी नुकसान हो सकता है। मुख्य समस्याएं इस प्रकार हैं:

रोग:

बैंगनी धब्बा (पर्पल ब्लोच): यह रोग *अल्टरनेरिया पोरी* नामक फफूंद के कारण होता है और 28-30°C तापमान तथा 70-90% नमी में तेजी से फैलता है। लक्षणों में पत्तियों और फूलों के डंठल पर सफेद धब्बे होते हैं, जिनका केंद्र बैंगनी रंग का होता है। समय के साथ ये धब्बे बढ़ते हैं और पत्तियां व डंठल सूखकर गिरने लगते हैं। गर्मियों

में खेत की गहरी जुताई करें और मिट्टी को खुला छोड़ दें, इससे रोग कम होगा। जैसे ही धब्बे दिखें, *डाइथेन एम-45* (1000 पीपीएम) या *रिडोमिल* (0.2%) को स्टिकर के साथ मिलाकर छिड़काव करें।

स्टेम्फिलियम ब्लाइट: यह *स्टेम्फिलियम वेसिकेरियम* नामक फफूंद के कारण होता है। बीज उत्पादन वाली फसल में (20-90%) यह ज्यादा नुकसान करता है, जबकि बल्ब वाली फसल में (5-40%) कम असर दिखता है। लक्षण पत्तियों और फूलों के डंठलों पर पीले या नारंगी रंग के छोटे धब्बे या धारियां बनती हैं। *डाइथेन एम-45* (0.25%) को स्टिकर के साथ मिलाकर छिड़काव करने से इस रोग को रोका जा सकता है।

काला फफूंद (ब्लैक मोल्ड): यह रोग *एस्पेरगिलस नाइजर* नामक फफूंद के कारण होता है और ज्यादातर भंडारण के दौरान फैलता है। यह प्याज की परतों के बीच काले रंग के रूप में दिखाई देती है, जिसे आँखों से देखा जा सकता है। प्रभावित बल्ब धीरे-धीरे सड़ जाते हैं। कटाई के दौरान बल्ब को नुकसान से बचना चाहिए, और संक्रमित बल्बों को तुरंत हटा दें। भंडारण में उचित स्वच्छता अपनाएं और भंडारण तापमान 20-25°C के आसपास रखा जाना चाहिए।

कीट:

श्रिप्स (तेला): यह प्याज की फसल का एक मुख्य कीट है। इसकी वजह से पत्तियों पर हल्के सफेद धब्बे बनते हैं, जिसे 'सिल्वरटॉप' कहा जाता है। यह फसल को 50% तक नुकसान पहुंचा सकता है और बीज उत्पादन पर भी असर डालता है। फसल चक्र अपनाते और नीले चिपचिपे जाल (Blue sticky trap) का उपयोग श्रिप्स को नियंत्रित करने में उपयोगी है। प्रोफेनोफोस (0.1%), कार्बोसल्फान (0.2%) या फिप्रोनिल (0.1%) जैसे कीटनाशकों का स्टिकर के साथ पत्तियों पर छिड़काव श्रिप्स की आबादी को काफी हद तक कम करता है।

माइट्स (घुन):

संक्रमित पौधों की पत्तियों के किनारों पर पीले धब्बे दिखाई देते हैं, पत्तियां मुड़ने लगती हैं और पूरी तरह नहीं खुलतीं। स्टिकर के साथ *डाइकोफोल* @0.2% या *सल्फर* @ 0.05% का छिड़काव माइट की आबादी को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करता है।

प्याज की मक्खी (डेलिआ एंटीक):

मक्खियाँ जड़ों के जरिए बल्ब के अंदर प्रवेश करती हैं और उसके कोमल हिस्सों को नुकसान पहुंचाती हैं। इससे पौधे पीले-भूरे रंग के हो जाते हैं और धीरे-धीरे सूख जाते हैं। भंडारण के दौरान संक्रमित बल्ब सड़ने लगते हैं और दूसरे बल्बों को भी खराब कर सकते हैं। फसल चक्र अपनाते चाहिये और थिमेट का उपयोग करना फायदेमंद है।

रोगिंग (अवांछित पौधों को हटाना): रोगिंग एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिससे फसल की गुणवत्ता और आनुवंशिक शुद्धता बनी रहती है। प्याज के बीज उत्पादन में दो चरणों में रोगिंग की जाती है: मदर बल्ब

उत्पादन चरण और बीज उत्पादन चरण। उच्चतम गुणवत्ता मानकों को सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक **चरणों** में कई बार रोगिंग की जाती है।

ऑफ-टाइप पौधों के मुख्य कारण हैं:

आनुवंशिक भिन्नताएँ (जेनेटिक वेरिएशन): कभी-कभी कुछ पौधों में स्वाभाविक रूप से आनुवंशिक बदलाव (म्यूटेशन) हो जाता है, जिससे वे किस्म के अनुरूप नहीं रहते।

स्वेच्छा से उगने वाले पौधे (वोलन्टरी ग्राइंग प्लांट्स): पिछले फसल के छोड़े गए बीजों से उगने वाले पौधे फसल में मिलावट उत्पन्न करते हैं।

यांत्रिक मिश्रण (मैकेनिकल मिक्सचर): बीज बोने और संभालने के दौरान अलग-अलग किस्मों के बीज अनजाने में मिल सकते हैं और यह ऑफ-टाइप पौधों को जन्म देता है।

मदर बल्ब उत्पादन चरण:

इस चरण में उन बल्बों का चयन किया जाता है, जिनका उपयोग बीज उत्पादन के लिए किया जाएगा। इसमें दो बार रोगिंग की जाती है:

वानस्पतिक (वेजिटेटिव) अवस्था: इस दौरान अबांछित पौधों (ऑफ-टाइप) और जल्दी या देर से फूल आने वाले (अर्ली या लेट बोल्टर्स) पौधों को हटा दिया जाता है। अर्ली या लेट बोल्टिंग अवांछनीय है क्योंकि इससे समय से पहले या बाद में फूल आते हैं, जो आनुवंशिक शुद्धता को कम कर सकता है।

बल्ब-निकालने की अवस्था: इस चरण में ऐसे बल्ब हटाए जाते हैं, जो आकार, रंग, या बनावट में अलग होते हैं। यह चरण सुनिश्चित करता है कि केवल समान और उच्च गुणवत्ता वाले बल्ब ही अगले चरण में आगे बढ़ेंगे।

बीज उत्पादन चरण:

बीज उत्पादन के दौरान कड़ी निगरानी रखी जाती है, जिसमें गुणवत्ता नियंत्रण को बनाए रखने के लिए रोगिंग के चार दौर शामिल होते हैं।

प्रारंभिक वनस्पति विकास: शुरुआती बढ़त के समय ही अलग दिखने वाले पौधों को हटा दिया जाता है।

प्री-एंथेसिस (फूल आने से पहले) अवस्था: इस चरण में सही पौधों को फूल आने के लिए छोड़ा जाता है, ताकि परागण के दौरान आनुवंशिक मिलावट न हो।

पुष्पन अवस्था (फ्लॉवरिंग स्टेज): फूलों की संरचना या रंग में

गड़बड़ी वाले पौधों को हटा दिया जाता है। बीज की गुणवत्ता में एकरूपता बनाए रखने के लिए यह महत्वपूर्ण है।

बीज परिपक्वता अवस्था: रोगिंग का अंतिम दौर यह सुनिश्चित करता है कि केवल सही प्रकार के पौधों से ही बीज काटे जाएं। यह अवस्था बीज स्टॉक की आनुवंशिक शुद्धता और गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है।

रोगग्रस्त और सड़े हुए बल्बों को भी भंडारण के दौरान छांटा जाता है। फूल आने के बाद आधार (फाउंडेशन) बीज में 0.10% और प्रमाणित बीज (सर्टिफाइड) में 0.20% तक ऑफ-टाइप पौधों की अनुमति होती है।

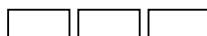
परागण: प्याज एक क्रॉस-परागण वाली फसल है, जिसमें मधुमक्खियाँ परागण का मुख्य स्रोत होती हैं। अच्छे परागण के लिए बीज के खेत में 5-6 मधुमक्खी के बक्से/हेक्टेयर रखना फायदेमंद होता है।

बीज की कटाई: रोपाई या बल्ब लगाने के 4-5 महीने बाद, प्याज के इंठल कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। बल्ब से बीज उत्पादन विधि में, एक ही पौधे पर कई फूल इंठल निकलते हैं और अलग-अलग समय पर पकते हैं, इसलिए 2-3 बार कटाई करनी पड़ती है। बीज इंठल काटते समय 2-3 सेमी का तना छोड़ दिया जाता है और फिर बीजों को अच्छी तरह से धूप में सुखाया जाता है।

बीज उपज: बीज की उपज एक वर्षीय फसल के लिए 7-8 क्विंटल/हेक्टेयर और 2 वर्षीय बीज फसल के लिए 8.5-10 क्विंटल/हेक्टेयर के बीच होती है, जो अच्छे मौसम में उचित देखभाल प्रदान करने पर 12 क्विंटल/हेक्टेयर तक जा सकती है।

बीज मानक: बीजों की गुणवत्ता का अनुमान विभिन्न मापदंडों द्वारा लगाया जाता है। आधार और प्रमाणित बीज दोनों के लिए अंकुरण क्षमता 70%, शुद्धता 98% और निष्क्रिय पदार्थ 2% होना चाहिए। अन्य फसल बीज और खरपतवार बीज आधार (फाउंडेशन) बीज के लिए 5 बीज/किलोग्राम और प्रमाणित (सर्टिफाइड) बीज के लिए 10 बीज/किलोग्राम से अधिक नहीं होना चाहिए और बीजों को 6-8% नमी तक सुखाया जाता है, जो पैकिंग की जरूरत पर निर्भर करता है यदि बीजों को नमी-रोधक कंटेनर में पैक करना हो, तो उन्हें 6% तक की नमी अन्यथा 8% नमी तक ही सुखाया जाता है।

अर्थशास्त्र (लागत और मुनाफा): अगर बीज की औसत उपज 8.0-9.0 क्विंटल प्रति हेक्टेयर हो और इसकी कीमत 2000 रुपये प्रति किलोग्राम हो, तो किसानों को प्रति हेक्टेयर लगभग 3.5 - 4.0 लाख रुपये का लाभ हो सकता।



भारत में बेहतर निर्यात संभावनाओं के लिए कृषि वस्तुओं का प्रमाणीकरण

नरेन्द्र मोहन सिंह, के.वी.प्रवीण, सुधीर कुमार झा एवं अलका सिंह

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

कृषि वस्तुओं का प्रमाणीकरण वैश्विक निर्यात प्रक्रिया में तेजी से महत्वपूर्ण हो गया है, विशेष रूप से गंतव्य बाजारों द्वारा लगाए गए जटिल आयात नियमों और मानकों को समझने वाले उत्पादकों के लिए। भारत में, आमतौर पर खाद्य सुरक्षा प्रबंधन प्रणालियों पर आधारित मछली, डेयरी, पोल्ट्री, मांस और शहद जैसे विभिन्न उत्पादों के निर्यात प्रक्रिया के लिए प्रमाणीकरण अनिवार्य है। इसके अलावा, यूरोपीय और अमेरिकी बाजार ताजी उपज पर गुणवत्ता मानक लागू करते हैं, जिसमें आकार, आकृति, दोष, रंग और ऑर्गेनोलेप्टिक गुण जैसे मानदंड निर्दिष्ट होते हैं। इस तरह के प्रमाणपत्र न केवल सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं बल्कि समझदार अंतरराष्ट्रीय खरीदारों द्वारा मांग की गई कठोर गुणवत्ता आवश्यकताओं के अनुरूप भी होते हैं।

प्रमाणीकरण एक महत्वपूर्ण आश्वासन के रूप में कार्य करता है कि किसी वस्तु की उत्पादन प्रक्रिया विशिष्ट मानदंडों या मानकों का अनुपालन करती है, जिससे भौगोलिक रूप से अलग-अलग उत्पादकों और उपभोक्ताओं के बीच व्यापार की सुविधा मिलती है।

यह लेख **कृषि निर्यात में प्रमाणीकरण के महत्व** की जांच करता है, विविध बाजार मानकों को पूरा करने और व्यापार व्यवहार्यता बढ़ाने में इसकी भूमिका पर जोर देता है।

परिचय: हाल के वर्षों में, कृषि वस्तुओं के प्रमाणीकरण ने निर्यात में अधिक महत्व प्राप्त कर लिया है। निर्यात करने वाली वस्तुओं के उत्पादकों को आयात करने वाले देशों या विशिष्ट बाजारों द्वारा सुझाए गए कई आयात नियमों और मानकों का पालन करने की

आवश्यकता होती है। प्रमाणीकरण दर्शाता है कि प्रमाणित उत्पाद की निर्माण प्रक्रिया विशिष्ट मानदंडों या मानकों का पालन करती है। यह उन मामलों में बहुत उपयोगी हो सकता है जहां उत्पादक और उपभोक्ता भौगोलिक रूप से अलग-अलग हैं और उनका कोई सीधा संपर्क नहीं है। अंतरराष्ट्रीय व्यापार एक विशिष्ट उदाहरण है जहां खरीदार आमतौर पर निर्माता के मानकों के अनुपालन की जांच करने में असमर्थ होते हैं। मानक के अनुपालन को सत्यापित करने के मुख्य रूप से तीन तरीके हैं:

1. प्रथम-पक्ष सत्यापन: इस मामले में, कंपनी स्वयं एक विशेष मानक का पालन करने का विकल्प चुनती है। मानक का पालन करने के लिए, यह कंपनी के भीतर से चयनित कर्मचारियों को अधिकृत कर सकता है।

2. द्वितीय-पक्ष सत्यापन: इस मामले में, एक कंपनी अपने आपूर्तिकर्ताओं को एक विशेष मानक का पालन करने का निर्देश देगी।

3. तृतीय-पक्ष सत्यापन: इस प्रकार के सत्यापन में, एक कंपनी अपने आपूर्तिकर्ताओं से एक विशेष मानक को पूरा करने और उनके अनुपालन की जांच के लिए एक बाहरी एजेंसी नियुक्त करने की मांग करती है।

जैविक (ओर्गेनिक) प्रमाणीकरण

जैविक प्रमाणीकरण में जैविक खाद्य उत्पादकों का सत्यापन शामिल है। खाद्य प्रोसेसर, बीज आपूर्तिकर्ता, रेस्तरां और खुदरा विक्रेताओं सहित खाद्य उत्पादन में निकटता से शामिल व्यवसाय भी किसानों के साथ प्रमाणीकरण से गुजर सकते हैं। यह प्रक्रिया फसल की खेती, भंडारण, प्रसंस्करण, पैकेजिंग और परिवहन जैसे संचालन के विभिन्न चरणों में विशिष्ट मानकों का पालन अनिवार्य करती है। मुख्य रूप से, इन मानकों का उद्देश्य कृषि पद्धतियों में रसायन आधारित इनपुट और जीएमओ के उपयोग पर रोक लगाना है, जिससे कम से कम लगातार तीन वर्षों तक रसायन मुक्त फसल भूमि का उपयोग करना और कृषि गतिविधियों के व्यापक रिकॉर्ड बनाए रखना आवश्यक हो। अधिकांश समकालीन जैविक मानक निजी प्रमाणन एजेंसियों द्वारा तैयार और स्थापित किए जाते हैं। कुछ देशों ने जैविक प्रमाणीकरण से संबंधित अपने राष्ट्रीय स्तर के मानक और नियम स्थापित किए हैं (उदाहरण के लिए, जापान,



चित्र : भारत में कृषि वस्तुओं के प्रमाणीकरण के उपरान्त कृषि वस्तुओं के निर्यात की तैयारी।

चीन, कोरिया, मलेशिया, थाईलैंड)। थाईलैंड में ग्रीन नेट/अर्थ नेट फाउंडेशन भी जैविक खेती को बढ़ावा देता है। यूरोपीय संघ, संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान, आदि कुछ ऐसे देश हैं जिन्होंने जैविक उत्पादों के लिए देश-स्तरीय लेबलिंग नियमों को सफलतापूर्वक लागू किया है, और निर्यातकों को इन देशों में निर्यात करने के लिए इन नियमों को पूरा करना होगा।

जैविक प्रमाणीकरण विनियमन

भारत सरकार के वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय द्वारा 2001 में शुरू किया गया, राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम (एनपीओपी) जैविक प्रमाणीकरण के लिए मानकों, प्रक्रियाओं और मानदंडों की रूपरेखा तैयार करता है। यह अनुमोदित निरीक्षण और प्रमाणित करने वाली एजेंसियों को भी निर्दिष्ट करता है, जैविक लोगो के उपयोग के लिए दिशानिर्देशों की रूपरेखा तैयार करता है और इसके उपयोग पर प्रतिबंध लगाता है। एनपीओपी के अनुसार, जैविक प्रमाणीकरण के लिए निम्नलिखित प्रमुख मानकों का पालन आवश्यक है:

- भूमि का जैविक खेती में रूपांतरण।
- खेत पर प्राकृतिक आदानों का विशेष उपयोग।
- आनुवंशिक रूप से संशोधित इनपुट और विकिरण प्रौद्योगिकी पर प्रतिबंध।
- भौतिक, जैविक और यांत्रिक प्रक्रियाओं का लगातार एकीकरण।
- पड़ोसी खेतों या बाहरी स्रोतों से संदूषण की रोकथाम।
- टिकाऊ कृषि पद्धतियों का कड़ाई से पालन।

जैविक प्रमाणीकरण हेतु पात्रता

व्यक्तिगत किसान या किसान समूह, जिसमें एक ही भौगोलिक क्षेत्र के 25 से 500 सदस्य शामिल हैं, जैविक प्रमाणीकरण के लिए आवेदन करने के पात्र हैं। कृषि द्वारा उत्पादित जैविक उत्पादों के लिए प्रमाणीकरण दिया जाता है, हालाँकि भूमि को जैविक के रूप में प्रमाणित नहीं किया जा सकता है। एक बार प्रमाणित होने के बाद, ये उत्पाद जैविक लेबल धारण कर सकते हैं और घरेलू और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विपणन किए जा सकते हैं। जैविक उत्पादों के लिए विदेशी बाजारों द्वारा दिए गए बड़े हुए प्रोत्साहन के कारण, भारत जैविक रूप से प्रमाणित कृषि वस्तुओं का पर्याप्त मात्रा में निर्यात करता है। कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा) ट्रेसनेट नामक इलेक्ट्रॉनिक सेवा के माध्यम से निर्यात के लिए प्रमाणन की सुविधा प्रदान करता है। कई हितधारक उत्पादकों, ऑपरेटरों और प्रमाणन संगठनों द्वारा प्रदान किए गए ट्रेसिबिलिटी डेटा को समेकित करने के लिए जैविक आपूर्ति श्रृंखला में इस मंच का उपयोग करते हैं। जैविक प्रमाणीकरण प्राप्त करने वाले उत्पादों को विपणन उद्देश्यों के लिए "इंडिया ऑर्गेनिक" लोगो का उपयोग करने की अनुमति है।

जैविक प्रमाणीकरण में शामिल कदम

भारत में, राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम (एनपीओपी) के तहत मान्यता प्राप्त निकाय जैविक प्रमाणीकरण आयोजित करने के लिए जिम्मेदार हैं। एनपीओपी जैविक कृषि के लिए मानदंड स्थापित करता है और इसका लक्ष्य पूरे देश में जैविक खेती को बढ़ावा देना है। संयुक्त राज्य अमेरिका का कृषि विभाग (यूएसडीए), यूरोपीय आयोग और स्विट्जरलैंड जैविक उत्पादन और मान्यता प्रक्रियाओं के लिए एनपीओपी मानकों को अपने समकक्ष मानते हुए मान्यता देते हैं।

भारत में जैविक प्रमाणीकरण के प्रमुख कदमों में शामिल हैं:

- किसी व्यक्तिगत किसान या किसानों के समूह द्वारा किसी मान्यता प्राप्त जैविक प्रमाणन निकाय को जैविक प्रमाणीकरण आवेदन प्रस्तुत करना।
- आवेदक को मान्यता प्राप्त निकाय द्वारा मानक और परिचालन विवरण जारी करना।
- फीस का भुगतान।
- फार्म संचालन दस्तावेजों का ऑडिट।
- खेत प्रबंधक के सहयोग से एक बाहरी निरीक्षक द्वारा क्षेत्र निरीक्षण और दस्तावेज़ीकरण किया जाता है।
- मानकों का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए गहन निरीक्षण।
- क्षेत्र निरीक्षक द्वारा रिपोर्ट तैयार करना।
- एक निर्दिष्ट निकाय द्वारा रिपोर्ट की समीक्षा।
- प्रमाणन जारी करने पर अंतिम निर्णय।



जैविक प्रमाणीकरण के लाभ

जैविक प्रमाणित उत्पाद अपनी कथित गुणवत्ता और कड़े मानकों के पालन के कारण प्रीमियम कीमत पर मिलते हैं। यह प्रमाणीकरण क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों तक पहुंच प्रदान करता है, जिससे किसानों और अर्थव्यवस्था के लिए समान रूप से अवसर बढ़ते हैं। इसके अतिरिक्त, यह फंडिंग और तकनीकी मार्गदर्शन को आकर्षित करके, स्थायी प्रथाओं को बढ़ावा देकर

घरेलू कृषि उत्पादकों को सशक्त बनाता है। इसके अलावा, जैविक खेती अपनी पर्यावरण-अनुकूल उत्पादन प्रक्रियाओं के माध्यम से पर्यावरण प्रबंधन को बढ़ावा देती है, जिससे उपभोक्ताओं और हितधारकों के लिए इसकी अपील और बढ़ जाती है।

आईएसओ 14001 प्रमाणन

यह प्रमाणीकरण सार्वजनिक और निजी संस्थानों में व्यावहारिक रूप से पर्यावरण प्रबंधन को लागू करने के लिए विकसित किया गया है। आईएसओ राष्ट्रीय मानक संस्थानों का एक निजी वैश्विक नेटवर्क है जो राष्ट्रीय सरकारों, औद्योगिक क्षेत्र और उपभोक्ता प्रतिनिधियों के साथ मिलकर काम करता है। हालाँकि संगठनों में पर्यावरण प्रबंधन के लिए कई ISO मानक उपलब्ध हैं, ISO 14001 विशेष रूप से प्रमाणन के लिए है। इसके तहत राष्ट्रीय मान्यता निकायों द्वारा मान्यता प्राप्त एजेंसियों द्वारा प्रमाणन प्रदान किया जाता है। यह सरकारी क्षेत्र या निजी क्षेत्र से हो सकता है।

आईएसओ 14001 प्रमाणन प्रणाली पर भरोसा करने से संगठनों को कई लाभ मिलते हैं। सबसे पहले, यह वर्तमान और आगामी वैधानिक और नियामक दायित्वों के अनुपालन के प्रति प्रतिबद्धता का संकेत देता है। दूसरे, यह पर्यावरणीय चिंताओं के साथ व्यावसायिक उद्देश्यों के संरेखण की सुविधा प्रदान करता है, जिससे कंपनियों को स्थिरता को प्राथमिकता देते हुए लक्ष्यों को पूरा करने में सक्षम बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त, आईएसओ 14001 प्रमाणन से परिचालन क्षमता में वृद्धि और कम लागत के माध्यम से प्रतिस्पर्धी लाभ और वित्तीय लाभ हो सकता है। इसके अलावा, संगठन के पर्यावरण प्रबंधन प्रणालियों में आपूर्तिकर्ताओं को एकीकृत करने से आपूर्ति श्रृंखला में बेहतर पर्यावरणीय प्रदर्शन को बढ़ावा मिलता है, जो समग्र स्थिरता लक्ष्यों में योगदान देता है।

निष्पक्ष व्यापार (फेयरट्रेड मार्क)

फेयरट्रेड मार्क का प्रतीक निष्पक्ष व्यापार यह सुनिश्चित करता है कि उत्पादक और व्यवसाय स्वतंत्र रूप से सत्यापित अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त मानकों का पालन करें। यह विकासशील देशों में किसानों और श्रमिकों के लिए उचित मूल्य, सभ्य कामकाजी परिस्थितियों और न्यायसंगत सौदों की पेशकश करके व्यापार को बदल देता है, जिसका लक्ष्य उचित मुआवजा प्रदान करना है। श्रम अधिकारों, पर्यावरणीय स्थिरता और सामाजिक जिम्मेदारियों का अनुपालन अनिवार्य है। प्रतिभागियों को टिकाऊ उत्पादन लागत, सामुदायिक परियोजनाओं के लिए उचित व्यापार प्रीमियम, बेहतर कामकाजी परिस्थितियों, शोषणकारी प्रथाओं पर प्रतिबंध, ऋण तक पहुंच और बड़ी हुई सुरक्षा और खरीदारों के साथ संबंधों को कवर करने वाली कीमतों से लाभ होता है, जिससे अधिक स्थिर भविष्य को बढ़ावा मिलता है।

फेयर-ट्रेड लेबलिंग ऑर्गेनाइजेशन इंटरनेशनल (एफएलओ) मानकों और प्रमाणन की प्रक्रिया को नियंत्रित करता है। एफएलओ

एक नेटवर्क संगठन है जिसमें एशिया, यूरोप, ओशिनिया और अमेरिका के लगभग 20 राष्ट्रीय/गैर-सरकारी संगठन शामिल हैं। यह भी समझने की आवश्यकता है कि एफएलओ नेटवर्क के बाहर अन्य संगठन भी मौजूद हैं जो निष्पक्ष व्यापार के मानकों को स्थापित करने के समान कार्य करते हैं। प्रमाणन प्राप्त करने के लिए, संगठन को लोकतांत्रिक तरीके से काम करना चाहिए। जिन अन्य आवश्यकताओं को पूरा करने की आवश्यकता है उनमें कंपनी के श्रमिकों के उपचार, सामूहिक सौदेबाजी करने और प्रदर्शन करने की अनुमति, आवास और स्वच्छता के साथ-साथ श्रमिकों के स्वास्थ्य और सुरक्षा, और बाल श्रम या जबरन श्रम की अनुपस्थिति से संबंधित शामिल हैं। इसके अलावा, विशिष्ट देशों के पर्यावरण और सामाजिक कानूनों का अनुपालन और उचित ऑडिटिंग भी आवश्यक है।

एक उत्पादक समूह सहकारी या किसान संघ एफएलओ निष्पक्ष-व्यापार प्रमाणन के लिए आवेदन कर सकता है। फिर स्थानीय लेखा परीक्षकों द्वारा फार्म का निरीक्षण किया जाएगा, जिसके बाद प्रमाणन एजेंसी उत्पादक संघ के प्रमाणन पर निर्णय लेगी। निष्पक्ष व्यापार की आवश्यकताओं के अनुपालन को सत्यापित करने और निष्पक्ष व्यापार प्रीमियम के उपयोग की जांच करने के लिए प्रमाणन के बाद हर साल नियमित निरीक्षण किया जाएगा। निष्पक्ष व्यापार का लाभ यह है कि प्रमाणित उत्पादों को स्थिर, बेहतर कीमतें प्राप्त होने की अधिक संभावना होती है। उत्पादन लागत उत्पादकों को भुगतान की गई वास्तविक कीमत निर्धारित करती है। इसके अलावा, लागत में निष्पक्ष व्यापार की आवश्यकताओं के अनुपालन के लिए किए गए सभी अतिरिक्त शुल्क शामिल हैं।

अच्छी कृषि पद्धतियाँ (जीएपी)

एफएओ के अनुसार, अच्छी कृषि प्रथाएं (जीएपी) में कृषि उत्पादन और उत्पादन के बाद की प्रक्रियाओं दोनों पर लागू सिद्धांतों का एक सेट शामिल है, जिसका उद्देश्य आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय स्थिरता पर विचार करते हुए सुरक्षित और स्वस्थ कृषि उत्पादों का उत्पादन सुनिश्चित करना है। जीएपी ऑन-फार्म प्रक्रियाओं के भीतर पर्यावरणीय, आर्थिक और सामाजिक आयामों में स्थिरता को संबोधित करते हैं, जिससे सुरक्षित और उच्च गुणवत्ता वाले खाद्य और कृषि उत्पादों का उत्पादन होता है। हाल ही में, कृषि-स्तरीय कृषि पद्धतियों को औपचारिक बनाने के लिए दिशानिर्देश विकसित किए गए हैं, जिन्हें जीएपी कोड, मानक और विनियम के रूप में जाना जाता है। ये दिशानिर्देश खाद्य गुणवत्ता और सुरक्षा को बढ़ाने, बाजार पहुंच को सुविधाजनक बनाने और कीटनाशकों के उपयोग, अधिकतम अवशेष सीमा (एमआरएल), और अन्य संदूषण खतरों से जुड़े जोखिमों को कम करने में मदद करते हैं, अंततः बेहतर कृषि प्रथाओं और उत्पाद सुरक्षा में योगदान करते हैं (लियू एट अल, 2007)।

वैश्विक जीएपी

ग्लोबल जीएपी (GLOBALGAP) एक निजी संगठन है जो अच्छी कृषि पद्धतियों (GAPs) के लिए स्वैच्छिक प्रमाणन मानक स्थापित करता है, जो मूल रूप से यूरोपीय सुपरमार्केट श्रृंखलाओं के एक संघ द्वारा विकसित किया गया है। ये मानक उत्पादकों के बीच अच्छी कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देकर खाद्य सुरक्षा में उपभोक्ता का विश्वास बढ़ाते हैं। खाद्य सुरक्षा और ट्रेसिबिलिटी पर केंद्रित, ग्लोबल जीएपी (GLOBALGAP) प्रमाणन रोपण से पहले से लेकर उत्पाद वितरण तक की प्रक्रियाओं को कवर करता है। निर्माता या निर्माता समूह प्रमाणन और पंजीकरण शुल्क के अधीन प्रमाणन के लिए आवेदन कर सकते हैं। अनुपालन के लिए मजबूत प्रशासनिक प्रणालियों द्वारा सुविधाजनक, सावधानीपूर्वक रिकॉर्ड रखने की आवश्यकता होती है। हालांकि प्रीमियम कीमतों या उत्पाद लेबलिंग से जुड़ा नहीं है, प्रमाणीकरण उत्पादकों के लिए प्रतिस्पर्धात्मक लाभ प्रदान करता है जब वे उन खुदरा विक्रेताओं के साथ जुड़ते हैं जिन्हें ग्लोबल जीएपी (GLOBALGAP) अनुपालन की आवश्यकता होती है, जो व्यवसाय-से-व्यवसाय संबंधों में इसके महत्व पर जोर देता है।

भारत की अच्छी कृषि पद्धतियाँ

भारत में कृषि क्षेत्र, खुदरा विक्रेताओं और खरीदारों के साथ, स्वच्छता और खाद्य सुरक्षा मानकों में सुधार के लिए अच्छी कृषि पद्धतियों (जीएपी) को लागू करने के संभावित लाभों को पहचानता है। जीएपी को अपनाकर, किसान नए बाजारों तक पहुंच सकते हैं, गुणवत्तापूर्ण इनपुट प्राप्त कर सकते हैं, अपने खेतों का मूल्य बढ़ा सकते हैं और घरेलू और वैश्विक स्तर पर अपने कृषि कौशल में सुधार कर सकते हैं। अंतरराष्ट्रीय कृषि व्यापार तेजी से महत्वपूर्ण होता जा रहा है, कृषि उपज के व्यापार को सुविधाजनक बनाने के लिए एक स्पष्ट प्रमाणीकरण और मान्यता तंत्र के साथ न्यूनतम मानकों को परिभाषित करना आवश्यक है। भारत में GAP की शुरुआत टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देती है, पर्यावरण और सामाजिक विकास लक्ष्यों के साथ संरेखित करती है, और भोजन की गुणवत्ता और सुरक्षा को बढ़ाती है। यह कीटनाशकों के उपयोग, संदूषक स्तर और अन्य खतरों के संबंध में राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय नियमों के अनुपालन में भी सहायता करता है। INDGAP (इंडियन गुड एग्रीकल्चरल प्रैक्टिसेज) का फोकस न केवल उपज की मात्रा और गुणवत्ता सुनिश्चित करना है, बल्कि खाद्य सुरक्षा, कटाई से पहले और बाद की प्रथाओं और श्रमिकों के स्वास्थ्य और सुरक्षा को भी सुनिश्चित करना है। INDGAP छोटे और सीमांत किसानों के लिए बेसिक जीएपी और बड़े खेतों के लिए सुव्यवस्थित मानदंड जैसे अनुरूप प्रमाणन मानदंड प्रदान करता है, जो अंतरराष्ट्रीय जीएपी अपनाने के लिए चरणबद्ध दृष्टिकोण को बढ़ावा देता है।

आसियान गैप द्वारा अच्छी कृषि पद्धतियों के लिए मानक निर्धारण

आसियान द्वारा 2006 में स्थापित ASEANGAP, क्षेत्र में अच्छी कृषि पद्धतियों (GAP) के लिए मानक निर्धारित करता है, विशेष रूप से ताजे फलों और सब्जियों के उत्पादन, कटाई और कटाई के बाद के प्रबंधन पर ध्यान केंद्रित करता है। इसका प्राथमिक उद्देश्य आसियान के भीतर देश-स्तरीय जीएपी पहलों में सामंजस्य स्थापित करना, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन में स्थिरता को बढ़ावा देना और घरेलू और वैश्विक स्तर पर व्यापार को सुविधाजनक बनाते हुए उपभोक्ताओं के लिए फलों और सब्जियों की सुरक्षा को बढ़ाना है। खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण प्रबंधन, श्रमिक स्वास्थ्य और सुरक्षा और उत्पादन की गुणवत्ता को कवर करने वाले चार मॉड्यूलों से युक्त, ASEANGAP प्रमाणन प्रक्रियाएं प्रत्येक आसियान देश में राष्ट्रीय अधिकारियों द्वारा संचालित की जाती हैं।

आसियान जीएपी का लक्ष्य प्रमाणित उत्पादकों को ताजे फलों और सब्जियों के निर्यात में सुधार के लिए बेहतर विकल्प प्रदान करके क्षेत्र में मानकों को सुसंगत बनाना और व्यापार का समर्थन करना है। क्षेत्र के भीतर, कुछ देश इसमें अग्रणी हैं, और अन्य देश उनका अनुसरण करते हैं। इस प्रकार आसियान जीएपी क्षेत्र के कुछ कम विकसित देशों को अपने राष्ट्रीय जीएपी को तैयार करने या अनुकूलित करने के लिए मानकों को अपनाने में मदद कर सकता है। आसियान जीएपी में उपलब्ध कार्यान्वयन के दिशानिर्देश, प्रशिक्षण-संबंधित सामग्री और अनुशासित प्रथाओं के कोड का उपयोग ऐसे देशों द्वारा किया जा सकता है। अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए सभी सदस्य देश अपने राष्ट्रीय GAP मानकों को आसियान GAP के मानकों के साथ सुसंगत बना सकते हैं। आसियान गैप का प्रमुख दोष खाद्य सुरक्षा के लिए उच्च जोखिम वाली वस्तुओं का बहिष्कार है। हालांकि, क्योंकि यह दुनिया में तुलनात्मक रूप से नया मानक है, भविष्य में इसके दायरे का विस्तार करने का अवसर है।

निष्कर्ष

कृषि निर्यात में प्रमाणीकरण पर बढ़ता जोर वैश्विक व्यापार को सुविधाजनक बनाने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करता है। यूरोप और अमेरिका जैसे प्रमुख बाजारों में प्रचलित कड़े आयात नियमों और गुणवत्ता मानकों के साथ, अनुपालन और बाजार पहुंच सुनिश्चित करने के लिए प्रमाणन अपरिहार्य हो जाता है। चाहे प्रथम-पक्ष, द्वितीय-पक्ष, या तृतीय-पक्ष सत्यापन के माध्यम से, प्रमाणीकरण उत्पादकों और उपभोक्ताओं के बीच विश्वास बनाने के लिए एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में कार्य करता है, विशेष रूप से भौगोलिक रूप से दूर के लेनदेन में। सुरक्षा और गुणवत्ता मानकों के पालन की गारंटी देकर, प्रमाणीकरण न केवल बाजार प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाता है बल्कि कृषि निर्यात क्षेत्र में सतत विकास को भी बढ़ावा देता है, जिससे अंततः उत्पादकों, उपभोक्ताओं और वैश्विक व्यापार संबंधों को लाभ होता है।

गेहूँ और कद्दू वर्गीय सब्जियों का समन्वित रिले प्रबंधन

सुरेश चंद राणा, एम.के.सिंह, संजय सिरोही एवं विजय सिंह जाटव

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षेत्रीय केंद्र, करनाल, हरियाणा

¹भा.क.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

सब्जियों का भारतीय कृषि में महत्वपूर्ण स्थान है। ये बहुत सी दूसरी फसलों की तुलना में प्रति ईकाई क्षेत्र में अधिक पैदावार देती है और कम समय में तैयार हो जाती है। भारत में खीरा वर्गीय कुल की लगभग 20 प्रकार की सब्जियों की खेती की जाती है इनमें धीया/लौकी, तोरी, करेला, पेठा/कद्दू, खीरा, तरबूज, खरबूज, ककड़ी, चप्पनकद्दू, टिण्डा, परवल, फूट, आदि मुख्य है। ये सभी बेलवाली फसलें होती हैं जो कम कैलोरी व सरलता से पचने वाली होने के साथ-साथ विटामिन्स, अमीनो अम्ल, खनिज लवणों एवं फाईबर/खाद्य रेशा का अच्छा स्रोत है।

उत्तर भारत के मैदानी भागों में साधारणतया आलू, गाजर, मटर, सरसों, तोरिया आदि फसल लेने के उपरांत अधिकतर किसान भाई जनवरी के अंत से लेकर मार्च के प्रथम पखवाड़े तक खीरा-ककड़ी वर्गीय सब्जियों की बुवाई बीज अथवा पौध रोपण द्वारा करते हैं तथा फसल की पैदावार अप्रैल से जून माह तक चलती है। दिसंबर या जनवरी माह में पॉलीथीन घर (पोली हाउस) में थैलियों में तैयार किये गए पौधों को फरवरी/मार्च माह में (पाला पड़ने का खतरा समाप्त होने पर) लगाकर इन फसलों की अगेती फसल ली जाती है जबकि अप्रैल में गेहूँ की कटाई उपरांत इन सब्जियों (खरबूज, तरबूज, पेठा आदि) की बिजाई करने से, जून माह में प्री-मानसून वर्षा के कारण फलों की गुणवत्ता में कमी आने से आर्थिक हानि होने की सम्भावना बनी रहती है। प्रयोगों में पाया गया है कि गेहूँ में ककड़ी-वर्गीय सब्जियों की अंतर-रिले फसल उत्पादन विधि के उपयोग से किसान भाई गेहूँ के खेत का उपयोग इन सब्जियों के फसल उत्पादन हेतु सफलतापूर्वक कर सकते हैं। बहु-फसलीय कृषि के अंतर्गत रिले खेती फसल उत्पादन की एक परंपरागत एवं महत्वपूर्ण पद्धति है। इस पद्धति में आधार फसल की कटाई से पहले आधार फसल की खड़ी अवस्था में ही खेत में अगली फसल की बुवाई की जाती है तथा अनुवर्ती फसल उतेरा फसल कहलाती है। रिले खेती के उपयोग से किसान भाई सीमित संसाधनों (भूमि, समय, पानी, श्रम आदि) एवं कम लागत से अधिक पैदावार लेने में सक्षम होता है।

रिले फसल उत्पादन विधि

रिले फसल उत्पादन की इस पद्धति में गेहूँ (आधार फसल)

की बुवाई के समय ही खीरा-ककड़ी वर्गीय सब्जियों (उतेरा फसल) के लिए भी योजना बना ली जाती है। गेहूँ की बीजाई हेतु खेत तैयार करते समय 4.5 से 5.5 मीटर की दूरी पर 50-60 सै.मी. चौड़ी व 30-40 सै.मी. गहरी नालियां बना कर छोड़ देते हैं। नालियों के बीच में गेहूँ की बीजाई की जाती है। गेहूँ की बीजाई (अक्टूबर-दिसंबर) से लेकर जनवरी - फरवरी तक इन नालियों को खाली रखते हैं। इस अवधि के दौरान इन नालियों का उपयोग तोरीया, पालक, मेथी, मूली, गाजर, मटर, बथुआ आदि अंतर-फसल उगाकर भी किया जा सकता है। अगर गेहूँ की बीजाई हेतु खेत तैयार करते समय नालियां नहीं बनाई गई हों तो जनवरी माह से मध्य फरवरी तक 4.5 से 5.5 मीटर की दूरी पर नालियां (8 से 10 नालियां प्रति एकड़) तैयार करते हैं। नालियों के किनारों पर 50-60 सै.मी. की दूरी पर थावले बना लेते हैं तथा नालियों को खरपतवार रहित कर लिया जाता है। नालियों में तैयार किए गए इन थावलों में फरवरी माह में (पाला पड़ने का खतरा समाप्त होने पर) बीज लगाते हैं। अगर अगेती फसल हेतु बेल वर्गीय सब्जियों (खरबूज, तरबूज, पेठा, धिया, तोरी आदि) की पौध पॉलीथीन बैग में तैयार की गई है तो नालियों में पौध का रोपण गेहूँ की कटाई से 45 से 60 दिन पहले करते हैं। पौध रोपाई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई करना आवश्यक होता है। पॉलीथीन बैग में पौध तैयार करने हेतु 15 सै.मी. लम्बे तथा 10 सै.मी. चौड़ाई वाले पॉलीथीन (100-200 गॉज)के थैलों में मिट्टी, रेत व खाद का मिश्रण बनाकर भर लेते हैं। प्रत्येक पॉलीथीन बैग की तली में 4-5 छोटे छेद कर लिए जाते हैं तथा मिश्रण भरते समय यह ध्यान रखते हैं कि प्रत्येक पॉलीथीन बैग के किनारे पर 2-3 सै.मी. जगह पानी देने के लिए खाली रहे। इन थैलों में बीज बोने से पहले बीज को फफुंदी नाशक से उपचारित कर लें। प्रत्येक थैले में 2-3 बीज दिसम्बर-जनवरी माह में लगाए जाते हैं। बीजों की बुवाई के बाद थैलों में हल्की सिंचाई फव्वारे की मदद से करते हैं। बीज अंकुरित होने पर प्रत्येक थैले में एक स्वस्थ पौधा छोड़कर बाकी पौधे निकाल देते हैं। पॉलीथीन बैग में तैयार किये जाने वाले पौधों को ठंड से बचाने हेतु आवश्यकतानुसार पॉलीथीन घर (पोली-हाउस) का प्रयोग किया जाता है। पॉलीथीन घर (पोली-हाउस) में बेल वर्गीय सब्जियों की पौध तैयार करने के लिए प्रो-ट्रे नर्सरी तकनीक का उपयोग भी किया जा सकता है।

निष्कर्ष

धान एवं गेहूँ में अधिक पैदावार देने वाली किस्मों की उपलब्धता, सुनिश्चित सिंचाई, बीज एवं उर्वरकों आदि पर सज्जिडी, बीजाई एवं कटाई मशीनों की उपलब्धता, न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) पर फसल खरीद गारंटी की सरकारी व्यवस्था के साथ-साथ अन्य फसलों की तुलना में इन फसलों की उच्च बाजार मांग और किसानों के लिए लाभप्रदता आदि के कारण उत्तर व उत्तर-पश्चिमी भारत के मैदानी भागों में गेहूँ-धान एक मुख्य फसल चक्र प्रणाली हैं। हरियाणा में धान की खेती लगभग 15 लाख हेक्टेयर एवं गेहूँ की खेती 23 लाख हेक्टेयर भूमि पर की जाती है। इन परिस्थितियों में किसान भाई गेहूँ एवं धान काटने के उपरांत या रिले विधि का उपयोग कर कोई कम अवधि की फसल उगाकर अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं। गेहूँ के खेतों में कद्दू-वर्गीय सब्जियों की रिले खेती की विधि को अपनाने से उत्तर व उत्तर-पश्चिमी भारत के मैदानी भागों में गेहूँ-धान फसल चक्र प्रणाली वाले क्षेत्रों में गेहूँ कटाई के बाद तथा धान की रोपाई तक (अप्रैल से जून) किसान भाई गेहूँ के खेत का उपयोग खरबूज, तरबूज, कद्दू/सीताफल, पेठा, लौकी, तोरी आदि सब्जियों (जिनकी बेल अधिक फेलती है) की फसल व बीज उत्पादन हेतु सफलतापूर्वक कर सकते हैं। गेहूँ में बेल वर्गीय

सब्जियों की रिले फसल उत्पादन विधि का उपयोग करने से (मध्य जून तक) खरबूज, तरबूज, धीया व पेठा में क्रमशः 150 - 200, 250 - 300, 225 - 250 एवं 350 - 400 किंवटल प्रति हेक्टेयर फलों की औसत पैदावार होती है जबकि गेहूँ कटाई के उपरांत मूंग उगाने पर औसतन 8-10 किंवटल (बीज) एवं व लोबिया उगाने पर 30 -35 किंवटल (फलिया) प्रति हेक्टेयर की दर से प्राप्त होती है। हालाँकि, चैनलों की तैयारी में उपयोग की जाने वाली भूमि के कारण लगभग 6 से 7% गेहूँ की उपज में कमी आती है; फिर भी गेहूँ उपज की इस कमी की भरपाई कद्दूवर्गीय फसल की अच्छी उपज प्राप्त करके हो जाती है। यह प्रणाली पेठा, खरबूज, तरबूज आदि सब्जियों की बेलों को प्रारंभिक शाकीय विकास चरण के दौरान ठंड और पाले के जोखिम से सुरक्षा प्रदान करती है (क्योंकि चैनल दोनों तरफ से गेहूँ की फसल से ढका हुआ होता है); इस प्रकार, सब्जी उत्पादक को अगेती फसल प्राप्त करने में मदद मिलती है। इसके अतिरिक्त खेत में बनी नालियों में पौधे लगाने की इस रिले विधि में खाद व उर्वरकों का प्रयोग, निराई-गुड़ाई व सिंचाई आदि क्रियाएँ नालियों के अंदर ही की जाती है तथा दो नालियों के बीच की जगह में सिंचाई नहीं की जाती जिससे फल गीली मिट्टी के सम्पर्क में नहीं आते व खराब होने से बच जाते हैं एवं खरपतवार भी कम आते हैं।

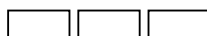
सारणी 1: कद्दूवर्गीय सब्जियों में बीज दर, फलों एवं बीज की औसत पैदावार

फसल	बीज दर (किलो प्रति एकड़)	फलों की औसत पैदावार (क्वि .प्रति एकड़)	बीज की औसत पैदावार (किलो प्रति एकड़)
तरबूज	1.5-2.0	120-150	75-80
पेठा	1.5-2.0	120-150	100-150
खरबूज	0.75-1.0	60-80	60-75
लौकी/ धीया	1.5.2.0	100-120	150-160

सारणी 2: कद्दूवर्गीय सब्जियों के प्रमुख कीट एवं रोग तथा उनके नियंत्रण के उपाय

कीट/रोग	हानि के लक्षण	नियंत्रण
माहू या चेपा	इस कीट के निम्फ व व्यस्क तने, कोमल पत्तियों व पुष्प कलिकाओं से रस चूसते हैं।	ईमिडाक्लोपरिड 17.8 एस.एल. या थायोमिथेक्सांम 70 डब्ल्यू.एस. 0.5.0.70 मि0लि0 दवा प्रति लिटर पानी की दर से छिड़काव करें।
लीफ माइनर	यह कीट पत्तियों के उपरी भाग पर टेढी-मेढी भूरे रंग की सुरंग बनाता है तथा इसका लारवा पत्तियों को हानि पहुंचाता है।	
सफेद मक्खी	इसका प्रकोप पत्तों की निचली सतह पर शिराओं के बीच में होता है। यह कीट पत्तियों से रस चूसता है। इसके प्रभाव से पत्तियां पीली हो जाती है तथा पत्ते सिकुड़कर नीचे की तरफ मुड़ जाते हैं। सफेद मक्खी विषाणु रोग का प्रसार भी करती है।	

फल भेदक मक्खी	फल भेदक मक्खी का प्रकोप फरवरी से लेकर नवंबर तक होता है। मादा मक्खी कोमल फलों के गूदे में अंडे देती है। मैगट फलों के अंदर गूदे को खाकर नष्ट कर देता है।	डाइमिथोएट 30ई0 सी0 अथवा मेलाथियान 50ई0सी0 अथवा मिथाइल डेमेटोन 25ई0सी0 1-1.5 मि0लि0 दवा प्रति लिटर पानी की दर से छिड़काव करें।
लाल कट्टू भृंग	इस कीट के ग्रब (प्यूपा) छोटे पौधों के तनों में जमीन के पास से छेद कर देते हैं जिससे पौधा सूख जाता है। ये ग्रब (प्यूपा) जमीन पर रखे फलों के निचले भाग में छेद कर फलों को हानि पहुंचाते हैं। भृंग (व्यस्क) पौधों की पत्तियों व फूलों को खाकर नष्ट करता है।	
तना विगलन/ कॉलर रोट	भूमि की सतह के पास पौधों के तनों पर भूरे रंग के पनीले तथा नरम धब्बे बनते हैं। पौधे पीले पड़कर सूख जाते हैं।	ट्राइकोडर्मा विरिडी 4 ग्राम अथवा कार्बांडाजिम 2 ग्राम प्रति किलो की दर से बीज उपचार करें।
चूर्णी फफूंद	इसके लक्षण पत्तियों व तनों की सतह पर सफेद या धुंधले धूसर सूक्ष्म आभा युक्त धब्बों के रूप प्रगट होते हैं जो बाद में सफेद चूर्ण के रूप में फैल जाते हैं।	10-15 दिन के अंतर पर कैराथेन के 0.05 प्रतिशत के धोल का छिड़काव करें।
एन्थेक्नोज	आरंभ में इस रोग से ग्रसित पौधों की पत्तियों, तने व डटलों पर छोटे पीले या जलाभ धब्बे दिखाई देते हैं जो बाद में मिलकर बड़े हो जाते हैं। फलों पर गोल सिकुड़े हुए जलाभ धब्बे बन जाते हैं।	मैकोजैब या कार्बांडाजिम के 0.20 प्रतिशत के धोल का छिड़काव करें।



बीजीय मसालों (जीरा व सौंफ) के मुख्य रोग एवं उनका प्रबंधन

बाबू लाल फगोडिया¹ एवं डी. के. राना²

¹कृषि विज्ञान केन्द्र, उजवा, नई दिल्ली एवं ²कृषि महाविद्यालय, किशनगढ़बास अलवर (राजस्थान)

विश्व में बीजीय मसाला उत्पादन तथा निर्यात के हिसाब से भारत का प्रथम स्थान है। इसलिये भारत को मसालों का मुख्य केंद्र भी कहा जाता है। मसाले हमारे खाद्य पदार्थों को स्वादिष्टता तो प्रदान करते ही है साथ ही हम इससे विदेशी मुद्रा भी अर्जित करते हैं। जीरा व सौंफ की मुख्य बीजीय फसल है, इनमें कई रोग लग जाते हैं जिससे इन बीज मसालों के उत्पादन के साथ गुणवत्ता व उपज में भी गिरावट आती है तथा निर्यात प्रभावित होता है। भारत में सौंफ की खेती राजस्थान (सिरोही, अजमेर व टोंक), आंध्रप्रदेश, पंजाब, उत्तर प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक और हरियाणा आदि भागों में की जाती है। इस फसल के रोग तथा इनका प्रबंधन इस प्रकार है।

जीरा के प्रमुख रोग:

1. उखटा: यह रोग *फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम कुमीनाइ* नामक कवक से होता है। इस रोग का प्रकोप पौधों की किसी भी अवस्था में हो सकता है परन्तु युवावस्था में ज्यादा होता है। जीरे में होने वाले रोगों में यह ज्यादा हानिकारक होता है क्योंकि इसके भयंकर प्रकोप से पूरी फसल नष्ट होती है। यह बीमारी भूमि एवं बीज के साथ आती है। रोग के सर्वप्रथम लक्षण उगने वाले बीज पर आते हैं तथा पौधा भूमि से निकलने के पहले ही मर जाता है। फसल पर रोग आने से रोगग्रस्त पौधे मुरझा जाते हैं। रोग का प्रकोप फूल आने के बाद होता है तो कुछ बीज बन जाते हैं। ऐसे रोगग्रस्त बीज हल्के, आकार में छोटे, पिचके हुए तथा उगने की क्षमता कम रखते हैं। रोगी पौधे कद में छोटे तथा दूर से पत्तियां पीली नजर आती हैं। इस रोग की रोकथाम के लिये रोग ग्रस्त खेत में जीरा न बोयें। बुवाई 15 नवंबर के आसपास करें। रोग रहित फसल से प्राप्त स्वस्थ बीज को ही बोयें। बीजों को कार्बेण्डाजिम 50 डब्ल्यू पी. से 2 ग्राम प्रति किलो बीज से उपचारित कर बुवाई करें। कम से कम तीन वर्ष का फसल चक्र (ग्वार-जीरा ग्वार-गेहू-ग्वार-सरसों) अपनायें। बुवाई पूर्व सरसों का भूसा या फलगाटी जमीन में मिलाने से रोग में कमी आती है। *ट्राइकोडर्मा विरिडी* मित्र फफूंद 3.0 किलो प्रति हेक्टेयर गोबर खाद में मिलाकर बुवाई पूर्व भूमि में देने से रोग का प्रकोप कम होता है। रोग रोधी जीरा किस्म जी सी 4 बोये।

2. झुलसा: यह रोग *आल्टरनेरिया बर्नसाई* नामक कवक से होता है। फसल में फूल आने शुरू होने के बाद आकाश में बादल छाए रहें तो इस रोग का लगना निश्चित हो जाता है। फूल आने के बाद से लेकर फसल पकने तक यह रोग कभी भी हो सकता है। मौसम



जीरे का झुलसा रोग

अनुकूल होने पर यह रोग बहुत तेजी से फैलता है। रोग के सर्वप्रथम लक्षण पौधे भी पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। धीरे-धीरे ये काले रंग में बदल जाते हैं। पत्तियों से वृत्, तने एवं बीज पर इसका प्रकोप बढ़ता है। पौधों के सिरे झुके हुए नजर आते हैं। संक्रमण के बाद यदि आर्द्रता लगातार बनी रहें या वर्षा हो जाये तो रोग उग्र हो जाता है। यह रोग इतनी तेजी से फैलता है कि रोग के लक्षण दिखाई देते ही यदि नियंत्रण कार्य न कराया जाये तो फसल को नुकसान से बचाना मुश्किल होता है। इस रोग की रोकथाम के लिये स्वस्थ बीजों को बोने के काम में लीजिए। फसल में अधिक सिंचाई नही करें। फूल आते समय लगभग 30-35 दिन की फसल अवस्था पर मेंकोजेब 0.2 प्रतिशत या टॉप्सिन एम 0.1 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें तथा आवश्यकतानुसार 10 से 15 दिन बाद दोहरायें। जैविक जीरा में इस रोग के नियंत्रण के लिए फसल पर गौमूत्र (10 प्रतिशत) व एनएसके (2.5 प्रतिशत) व लहसुन अर्क (2.0 प्रतिशत) घोल का छिड़काव करें।

3. पाउडरी मिल्ड्यू: यह रोग *इरीसाईफी पोलीगोनी* नामक कवक से होता है। इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों पर सफेद चूर्ण के रूप में नजर आते हैं। धीरे-धीरे पौधे के तने एवं बीज पर रोग फैल जाता है एवं पूरा पौधा दूर से ही सफेद दिखाई पड़ता है। रोग बढ़ने पर पौधा कमजोर हो जाता है। रोग का प्रकोप जल्दी हो जाता है तो बीज नहीं बनते हैं और देर से हो तो बीज बहुत छोटे एवं अधपके रह जाते हैं। इस रोग के लक्षण दिखाई देते ही गंधक चूर्ण 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव करें या घुलनशील गंधक ढाई किलो प्रति हेक्टेयर या केराथेन एल.सी. एक मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल का छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 10 से 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव या भुरकाव दोहरायें। जैविक जीरा में इस रोग के नियंत्रण के लिए फसल पर गौमूत्र (10 प्रतिशत) व एनएसके (2.5 प्रतिशत) व लहसुन का अर्क (2.0 प्रतिशत) घोल का छिड़काव करें।

सौंफ के प्रमुख रोग:

1. पाउडरी मिल्ड्यू: यह रोग 'इटीसाईफी पोलीगोनी नामक फंगस से होता है। इस रोग में पत्तियों व टहनियों पर सफेद रंग का चूर्ण दिखाई देता है जो बाद में पुरे पौधे पर फैल जाता है। अधिक प्रकोप से उत्पादन एवं गुणवत्ता कमजोर हो जाती हैं। इस रोग की रोकथाम के लिये गन्धक चूर्ण को 25-30 किलोग्राम/हेक्टेयर का भुरकाव करें या घुलनशील गंधक 2 ग्राम प्रति लीटर पानी या केराथेन एल.सी. 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 15 दिन बाद दोबारा स्प्रे करें।

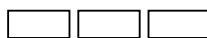


जीरे का झुलसा रोग

2. जड़ एवं तना गलन: यह रोग 'स्कलेरोटेनिया स्कलेरोटियोरम' व 'फ्यूजेरियम सोलेनाई' नामक कवक से होता है। इस रोग के प्रकोप से तना नीचे मुलायम या सॉफ्ट हो जाता है व जड़ गल जाती है। जड़ों पर छोटे-बड़े काले रंग के स्कलेरोशिया दिखाई देते हैं। इस रोग के प्रबंधन के लिये बुवाई से पूर्व बीज को कार्बेण्डाजिम 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार कर बुवाई करनी चाहिये या केप्टान 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से भूमि उपचारित करना चाहिये। ट्राइकोडर्मा विरिडी मित्र फफूंद 2.5 किलो प्रति हेक्टेयर गोबर खाद में मिलाकर बुवाई पूर्व भूमि में देने से रोग में कमी आती है।

3. झुलसा: सौंफ में झुलसा रोग रेमुलेरिया व ऑल्टरनेरिया नामक कवक से होता है। रोग के सर्वप्रथम लक्षण पौधों की पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। धीरे-धीरे ये काले रंग में बदल जाते हैं। पत्तियों से वृत्त, तने एवं बीज पर इसका प्रकोप बढ़ता है। संक्रमण के बाद यदि आर्द्रता लगातार बनी रहें तो रोग उग्र हो जाता है। रोग ग्रसित पौधों पर या तो बीज नहीं बनते या बहुत कम और छोटे आकार के बनते हैं। बीजों की विपणन गुणवत्ता का हास हो जाता है। नियंत्रण कार्य न कराया जाये तो फसल को बहुत नुकसान होता है। इस रोग को कम करने के लिये स्वस्थ बीजों को बोने के काम में लीजिए। फसल में अधिक सिंचाई नही करें। इस रोग के लगने की प्रारम्भिक अवस्था में फसल पर मेंकोजेब 0.2 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें तथा आवश्यकतानुसार 10 से 15 दिन बाद दोहरायें। रेमुलेरिया झुलसा रोग रोधी आर एफ 15, आर एफ 18, आर एफ 21, आर एफ 31, जी एफ 2 सौंफ बोये।

सौंफ की फसल में रेमुलेरिया झुलसा, ऑल्टरनेरिया झुलसा तथा गमोसिस रोगों का प्रकोप भी बहुत होता है जिससे उत्पादन एवं गुणवत्ता निम्न स्तर की हो जाती है। रोग रहित फसल से प्राप्त स्वस्थ बीज को ही बोयें। बीजोपचार तथा फसल चक्र अपनाकर तथा मेंकोजेब 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव कर कम किया जा सकता है।



मौन भूख (हिडन हंगर): समस्या एवं समाधान

रणवीर सिंह एवं सौरभ

सस्यविज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
राज महेन्द्र प्रताप प्रेम महाविद्यालय, गुरुकुल नारसन, हरिद्वार, उत्तराखंड

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ लगभग 55 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। देश की लगभग 142 करोड़ जनसंख्या के लिए खाद्य एवं पोषण सुरक्षा, रोजगार प्रदान करने तथा गरीबी कम करने में कृषि की महत्वपूर्ण भूमिका है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के प्रभाव को कुपोषण कहते हैं। यह हमारे दैनिक आहार में पोषक तत्वों की कमी के कारण होता है। कुपोषण मानव क्षमता के विकास के साथ आर्थिक एवं सामाजिक विकास को भी रोकता है। मौन भूख या हिडन हंगर का अर्थ ऐसी स्थिति से है, जब आपके शरीर में आवश्यक विटामिन और खनिज, या सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होती है और सामान्य भूख की तुलना में इसके लक्षण कम दिखते हैं। इस स्थिति के कोई खास लक्षण नहीं हैं और फिर भी दुनिया भर में 2 बिलियन लोग (3 में से 1 व्यक्ति) हिडन हंगर की समस्या से परेशान रहते हैं। हिडन हंगर अधिकांश गरीब देशों में बच्चों, गर्भवती महिलाओं और अन्य लोगों को प्रभावित करती है। भारतीय माता-पिता कार्बोहाइड्रेट और वसा से भरपूर खाद्य पदार्थों पर जोर देते हैं, लेकिन आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्वों पर ध्यान नहीं दिया जाता है। इसलिए, खराब पोषण भी बच्चों में हिडन हंगर का एक मुख्य कारण है।

भारत सहित विश्व के अनेक देशों में कुपोषण एक बड़ी समस्या है। इसके शिकार बच्चे जिंदगी की दौड़ में पीछे रह जाते हैं तथा उनका मानसिक और शारीरिक विकास नहीं हो पाता। इस कारण उनमें बहुत सी बीमारियाँ हो जाती हैं। विश्व बैंक के अनुसार भारत उन देशों में एक है, जहाँ कुपोषण की समस्या विकराल है। मनुष्य के सम्पूर्ण विकास के लिए भोजन में संतुलित मात्रा में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन, खनिज, लवण एवं अन्य सूक्ष्म तत्वों का होना आवश्यक है। भोजन में उक्त तत्वों की कमी से कुपोषण होता है तथा इसका सबसे बड़ा कारण पौष्टिक आहार की कमी



होना है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के लिए आहार विविधीकरण, पूरकता, संवर्धन और फसल जैवसंवर्धन का उपयोग किया जा रहा है। फसल जैवसंवर्धन पारम्परिक पादप प्रजनन, पराजीनी पद्धति या सस्य विधिओं के द्वारा एक फसल में विटामिन और खनिज अंश को बढ़ाने की एक प्रक्रिया है। प्रमुख जैवसंवर्धित फसलों की नियमित प्रयोग मानव पोषण और स्वास्थ्य में औसत स्तर का सुधार करता है।

"न्यूट्रिशन फॉर जीरो हंगर" पहल के तहत, हम वर्ल्ड फूड प्रोग्राम यूएसए, फीड द चिल्ड्रेन और द हंगर प्रोजेक्ट जैसे प्रमुख संगठनों के साथ साझेदारी कर रहे हैं, जो खाद्य सुरक्षा और पोषण को सुधारने के लिए प्रेरक बल के रूप में कार्य करते हैं।

वैश्विक स्तर पर, हम ग्रामीण चीन में कमजोर समुदायों तक अच्छे पोषण की पहुँच सुनिश्चित करने और मलेशिया में बच्चों के शिक्षा कार्यक्रमों का समर्थन करने पर काम कर रहे हैं, जो स्वस्थ खाद्य पदार्थों को बढ़ावा देते हैं और भूख की बढ़ती दरों का समाधान करने के लिए वैश्विक खाद्य प्रणालियों को अपनाते हैं। हमारी योजना 2030 तक भूख और कुपोषण के विभिन्न पहलुओं से प्रभावित अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचने की है। जीवन के हर पड़ाव में लोगों को जो भी भोजन मिलना चाहिए, वह पोषक तत्वों से भरपूर होना चाहिए। सामाजिक, खाद्य, शिक्षा और स्वास्थ्य प्रणालियों को आज और आने वाली पीढ़ियों के लिए छुपी भूख की समस्या को हल करने के लिए मिलकर काम करने की आवश्यकता है।

हिडन हंगर का अर्थ

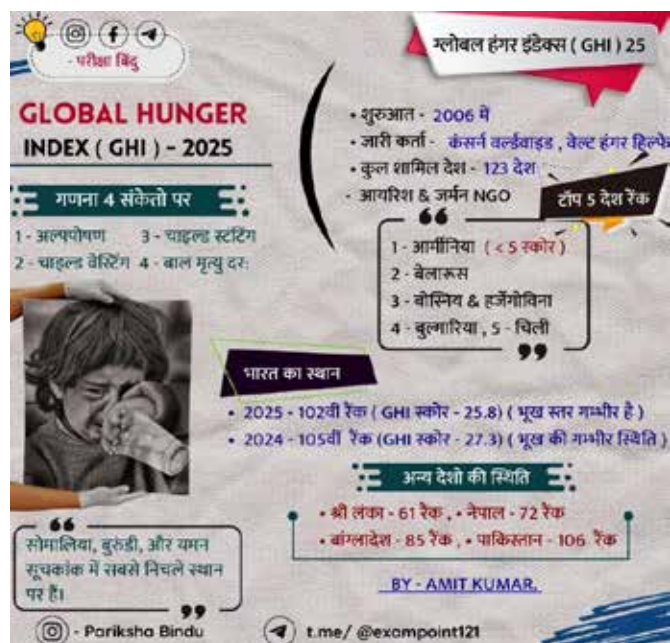
हिडन हंगर या मौन भूख का तात्पर्य, ऐसी स्थिति जब आपके शरीर में आवश्यक विटामिन और खनिज या सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होती है और सामान्य भूख की तुलना में इसके लक्षण दिखते हैं। मौन भूख एक प्रकार की कुपोषण है, जो आहार में विटामिन, खनिज (आयरन, जिंक, फोलिक एसिड और आयोडीन) और आहार रेशे जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के कारण होता है। दूसरे शब्दों में हिडन हंगर या 'मौन भूख' 'सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी' है, यह एक ऐसी स्थिति है, जहाँ व्यक्ति को पर्याप्त कैलोरी मिलती है, लेकिन शरीर में आवश्यक विटामिन और खनिज (जैसे आयरन, जिंक, विटामिन) की कमी होती है, जिससे स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है, जो अक्सर पता नहीं चलता और यह कुपोषण का एक गंभीर रूप है।

हिडन हंगर की परिभाषा

हिडन हंगर (मौन भूख) का तात्पर्य आवश्यक विटामिन और खनिज, (सूक्ष्म पोषक तत्वों) की भोजन में कमी से है। आपका पेट महसूस नहीं कर सकता है, परन्तु यह आपके स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। हिडन हंगर या मौन भूख को सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के रूप में भी जाना जाता है। भोजन में सूक्ष्म पोषक तत्वों (माइक्रोन्यूट्रिएंट्स) की कमी होने पर प्रभाव विनाशकारी हो सकते हैं, इससे मानसिक दुर्बलता खराब स्वास्थ्य और जहाँ तक की मृत्यु भी हो सकती है।

भारत में हिडन हंगर की स्थिति

वैश्विक भुखमरी सूचकांक (ग्लोबल हंगर इंडेक्स) 2022 में भारत को 121 देशों में से 107 वें स्थान पर रखा गया है। भारत को 100 में से 29.1 अंक मिले है और उसे गंभीर श्रेणी में रखा गया है। वह श्रीलंका, म्यांमार, नेपाल और बंगलादेश से भी निचले क्रम पर है, जिन्हें क्रमशः 66 वां, 71 वां, 81 वां और 84 वां स्थान मिला है। सार्क देशों में केवल अफगानिस्तान भारत के पीछे था।



वर्तमान में वैश्विक भुखमरी सूचकांक में वर्ष 2025 में भारत 123 देशों में 102 वें स्थान पर है और भारत का स्कोर 25.8 है, जो इस समस्या की गंभीरता को स्पष्ट रूप से परिलक्षित करता है। वैश्विक पोषण रिपोर्ट वर्ष 2021 के अनुसार 15 से 19 आयु वर्ग की आधी से अधिक भारतीय महिलाएं एनीमिया से ग्रस्त हैं। 5 वर्ष से कम आयु के लगभग 32 प्रतिशत बच्चों में सामान्य से कम वजन की समस्या है।

ग्लोबल हंगर इंडेक्स, 2024 के मुख्य बिंदुओं पर एक नजर

सूचकांक के अनुसार, 42 देशों में भुखमरी का स्तर चिंताजनक स्थिति में है। इस प्रकार 2030 तक शून्य भुखमरी का लक्ष्य हासिल

वैश्विक भुखमरी सूचकांक (ग्लोबल हंगर इंडेक्स-GHI) स्कोर के बारे में

वैश्विक भुखमरी सूचकांक (GHI) वैश्विक, क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर भुखमरी को व्यापक रूप से मापने एवं ट्रैक करने का एक साधन है। GHI स्कोर चार घटक संकेतकों के मूल्यांकन पर आधारित है:

<p>अल्प-पोषण: अपर्याप्त कैलोरी का सेवन करने वाली आबादी का हिस्सा।</p>	<p>बाल दुबलापन (Child Wasting): पांच वर्ष से कम आयु के बच्चों का वह वर्ग, जिनका वजन उनकी लम्बाई के हिसाब से कम है। यह तीव्र कुपोषण को दर्शाता है।</p>
<p>बाल डिजायन (Child Stunting): पांच वर्ष से कम आयु के बच्चों का वह वर्ग, जिनकी लम्बाई उनकी आयु के हिसाब से कम है। यह दीर्घकालिक कुपोषण को दर्शाता है।</p>	<p>बाल मृत्यु दर: पांच वर्ष पूरा होने से पहले मरने वाले बच्चों की संख्या, जो आंशिक रूप से अपर्याप्त पोषण और अस्वास्थ्यकर वातावरण के घातक मिश्रण को दर्शाता है।</p>

करना असंभव लग रहा है। वर्तमान प्रगति की गति से विश्व वर्ष 2160 तक भी निम्न भुखमरी स्तर प्राप्त नहीं कर पाएगा। विश्व का ग्लोबल हंगर इंडेक्स स्कोर 18.3 है, जिसे भुखमरी की गंभीरता के पैमाने पर मध्यम स्तर का माना जाता है। रिपोर्ट में लैंगिक असमानता, जलवायु परिवर्तन और भुखमरी के बीच संबंध को दर्शाया गया है। जेंडर, जलवायु और खाद्य सुरक्षा चुनौतियों से इस तरह से जुड़ा हुआ है कि सम्बंधित नीतियों एवं हस्तक्षेपों में इसे अक्सर अनदेखा कर दिया जाता है। महिलाएं और लड़कियां आमतौर पर खाद्य असुरक्षा और कुपोषण से सबसे अधिक प्रभावित होती हैं। वे मौसम की चरम स्थितियों और जलवायु आपात स्थितियों के प्रभावों से भी असमान रूप से पीड़ित होती हैं।

भारत में मौन भूख का परिदृश्य: यूनिसेफ की रिपोर्ट "एडोलसेंट, डाइट, न्यूट्रिशन, एंड ग्रोइंग वेल इन ए चेंजिंग वर्ल्ड" के अनुसार, भारत में 80 प्रतिशत से अधिक किशोर मौन भूख से पीड़ित हैं (भारत में हर दो किशोरों में से कम से कम छह सूक्ष्म पोषक तत्वों में से दो की कमी है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एन.एफ.एच. एस.) सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार, भारत में 68.4 प्रतिशत बच्चे और 66.4 प्रतिशत महिलाएं एनीमिया से प्रभावित हैं।

मौन भूख के कारण:

- अनुचित आहार:** विविधता के अभाव वाला आहार मौन भूख का कारण बन सकता है। सीमित मात्रा में खाद्य पदार्थों के सेवन से अच्छे स्वास्थ्य के लिये आवश्यक सभी आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व प्राप्त नहीं हो पाते हैं।
- मृदा क्षरण:** मानव स्वास्थ्य के लिये आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे; लोहा, जस्ता और आयोडीन का अक्सर मृदा में अभाव होता है। इसके कारण फसलों में इन सूक्ष्म पोषक तत्वों में कमी आ सकती है।
- गरीबी:** गरीबी और खाद्य असुरक्षा मौन भूख के प्रमुख कारक हैं। जो लोग गरीब हैं वे विविध और संतुलित आहार लेने में सक्षम नहीं हो सकते हैं, जिससे आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी हो सकती है। गरीबी के कारण भी लोग पोष्टिक आहार खरीदने में सक्षम नहीं होते हैं और कुछ पोष्टिक आहार तक ही सीमित रह जाते हैं। जिसके कारण से मौन भूख में

वृद्धि होती है। सूक्ष्म पोषक तत्वों का अवशोषण या पोषक तत्वों का उपयोग भी शरीर में सूक्ष्मपोषक तत्वों के संतुलन को बिगाड़ सकता है।

4. **स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच का अभाव:** अपर्याप्त स्वास्थ्य सुविधाओं से भी मौन भूख को बढ़ावा मिल सकता है। स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच में अभाव से सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी का पता लगाना और निदान करना कठिन हो सकता है।
5. **स्वच्छता की दयनीय स्थिति:** संक्रमण (विशेष रूप से आँतों में) से पोषक तत्वों के अवशोषण की क्षमता में कमी आ सकती है। स्वच्छता के अभाव से बार-बार संक्रमण हो सकता है जिससे सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को बढ़ावा मिल सकता है।
6. **लैंगिक असमानताएँ:** लैंगिक असमानताओं के कारण महिलाओं को मौन भूख का अधिक खतरा रहता है। मासिक धर्म, गर्भावस्था और स्तनपान के कारण इन्हें जहाँ एक ओर पोषण की अधिक आवश्यकता होती है, वहीं लैंगिक असमानताओं के कारण पौष्टिक खाद्य पदार्थों तक इनकी पहुँच सीमित हो सकती है।
7. अशिक्षा और जानकारी के अभाव में मौन भूख से शिकार लोग संतुलित और पौष्टिक आहार के महत्व को नहीं समझ सकते हैं और न ही विकासील देशों में पशुओं से बने खाद्य पदार्थों जैसे अंडे मांस, मछली, डेरी आदि को विस्तृत श्रृंखला या बड़ी चैन के रूप में उपयोग करने में सक्षम नहीं हो पाते हैं। जिसके कारण मौन भूख में वृद्धि होती है।
8. शरीर में किसी परजीवी का संक्रमण होने पर ही अवशोषण प्रभावित होता है। इससे सूक्ष्म पोषक तत्वों की बाँडी में कमी या हानि हो सकती है। भोजन में पर्याप्त मात्रा में वसा का सेवन करने से वसा में घुलनशील विटामिन जैसे; विटामिन 'ए' को सर्वोत्तम रूप में अवशोषित होता है।
9. भोजन में वसा की कमी होने पर भी वसा में घुलनशील विटामिन की शरीर में कमी आ जाती है। शराब की खपत सूट

में पोषक तत्वों के अवशोषण में रुकावट सकती है जिससे शरीर में सूक्ष्मपोषक तत्वों की कमी हो जाती है।

10. कैलोरी के साथ-साथ बच्चों के लिए सूक्ष्म पोषक तत्व भी आवश्यक होते हैं, क्योंकि इनसे प्रतिरक्षा और मस्तिष्क का विकास होता है। जब शरीर में विटामिन ए, आयरन, जिंक, आयोडीन, और फॉलिक एसिड जैसे आवश्यक पोषक तत्वों की कमी होती है, तो हिडन हंगर की समस्या पैदा हो सकती है। इसके अलावा, जीवन के कुछ चरणों जैसे गर्भावस्था और स्तनपान के दौरान या बीमारी के दौरान सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता काफी अधिक होती है। ऐसे में, पोषक तत्वों की बढ़ती मांग और आपूर्ति में कमी भी मौन भूख का कारण बन सकते हैं।

मौन भूख के लक्षण: मौन भूख के नैदानिक लक्षण, जैसे कि विटामिन ए की कमी के कारण होने वाला रतौंधी और अपर्याप्त आयोडीन के सेवन के कारण होने वाला हाइपरथायरायडिज्म, एक बार कमियों के गंभीर हो जाने पर दिखाई देने लगता है, आबादी के एक बड़े हिस्से का स्वास्थ्य और विकास कम स्पष्ट "अदृश्य" से प्रभावित होता है। इस कारण से, सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को अक्सर मौन भूख कहा जाता है।

मौन भूख के प्रभाव: मौन भूख के प्रभाव गंभीर हो सकते हैं, जिसके परिणामस्वरूप मानसिक दुर्बलता, खराब स्वास्थ्य, उत्पादकता में कमी और मृत्यु भी हो सकती है। जो पूरे जीवन चक्र में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के प्रभावों को दर्शाती है। हिडन हंगर के कई प्रभाव हो सकते हैं, जैसे की आहार में विटामिन 'ए' की कमी होने पर रतौंधी रोग हो सकता है या आंखों की रोशनी का कम होना शामिल है। साथ ही रोगों से लड़ने की क्षमता में भी कमी आती है। बच्चों में भोजन में आयोडीन की कमी होने पर मानसिक विकास रुक जाता है और बच्चों को सीखने में कठिनाई होती है। आहार में आयरन युक्त भोजन जैसे; हरी सब्जियाँ, फल आदि की कमी होने पर शरीर में आयरन की कमी हो जाती है, जिससे एनीमिया होने

सारणी: भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद द्वारा जारी आदमी और औरतों के लिए संतुलित खाद्य आहार के संगठन।

खाद्य समूह	आदमी (मात्रा ग्रा./दिन)		औरत (मात्रा ग्रा./दिन)		प्रतिशत
	गतिहीन	मध्यम/सक्रिय	गतिहीन	मध्यम/सक्रिय	
अनाज व श्री अन्न	275	360	200	300	250
दाल	80	120	60	90	75
हरी पत्तेदार सब्जी	150	150	150	150	150
अन्य सब्जियाँ	200	200	200	200	200
जड़ व कन्दमूल	100	100	100	100	100
फल	150	150	150	150	150
दूध	300	300	300	300	400
वसा एवं तेल	25	30	15	20	15
मूँगफली व मटर	30	30	30	30	40
मसाले	10	10	10	10	10

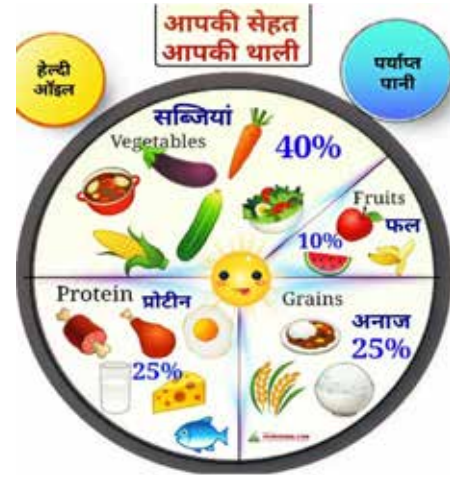
का खतरा बढ़ जाता है और यह अधिकतर बढ़ते हुए बच्चों तथा महिलाओं में देखा गया है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होने पर बच्चों कुपोषण मंद बुद्धि शरीर का संपूर्ण विकास नहीं हो पाता है, साथ ही कार्य करने की क्षमता में भी कमी आ जाती है। इसके अलावा रोगों से लड़ने की क्षमता में कमी होना, बालों का समय से पहले सफेद होना, शरीर की वृद्धि रुक जाना, वजन नहीं बढ़ना, मोटापा आदि हो सकते हैं। गर्भवती महिला में सूक्ष्मपोषक तत्वों की कमी होने पर गर्भ में पल रहे बच्चे का विकास ठीक से नहीं हो पाता है।

गर्भवस्था के दौरान हिडन हंगर का असर

1. गर्भवस्था के दौरान हिडन हंगर के कारण गर्भाशय का आंतरिक विकास रुक सकता है, जिससे बच्चे के विकास पर प्रभाव पड़ता है। गर्भवस्था में महिला में पोषण की कमी के कारण बच्चे का जन्म समय से पहले हो सकता है। किसी सूक्ष्म पोषक तत्व की कमी के कारण होने वाले हिडन हंगर से आपके बच्चे के स्वास्थ्य पर असर पड़ सकता है।
2. आयरन की कमी से एनीमिया हो सकता है। जिससे शरीर के टिशू में ऑक्सीजन की कमी हो सकती है, जो आगे थकान, सिरदर्द और शरीर के तापमान के खराब नियंत्रण का कारण बन सकता है। जिनके एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व है, जो केंद्रीय तंत्रिका तंत्र के विकास के लिए आवश्यक है। इसकी कमी से शरीर का विकास धीमा हो सकता है और मस्तिष्क को प्रभावित कर सकता है। जिनकी कमी डायरिया रोग के खिलाफ प्रतिरोधक क्षमता को कम करती है। डायरिया के कारण बच्चे के शरीर में पोषण और पानी की कमी हो सकती है।
3. विटामिन 'ए' कई बीमारियों के खिलाफ प्रतिरक्षा में सुधार के लिए एक महत्वपूर्ण माइक्रोन्यूट्रिएंट है और आंखों की रोशनी के लिए भी आवश्यक है, खासकर बच्चों में।
4. भ्रूण के विकास के लिए फोलिक एसिड की आवश्यक होती है और इसलिए इसकी कमी से जन्म के समय समस्याएं हो सकती हैं।
5. जीवन के प्रारंभिक दौर में मौन भूख से प्रभावित बच्चे अपनी पढ़ाई पूरी नहीं कर पाते हैं और उनमें गंभीर बीमारियों से पीड़ित होने की संभावना अधिक होती है।

हिडन हंगर का समाधान: यह एक प्रकार की खाद्य तत्वों की कमी से होने वाली समस्या है। जिसको अपने दैनिक भोजन में आवश्यक पोषक तत्वों को शामिल करके ठीक किया जा सकता है। इसके लिए हम कुछ निम्न प्रकार के तरीके उपयोग कर सकते हैं:-

1. **विभिन्न प्रकार के भोजन को दैनिक आहार में शामिल करना:**
हिडन हंगर का समाधान: यह एक प्रकार की खाद्य तत्वों की कमी से होने वाली समस्या है। जिसको अपने दैनिक भोजन में आवश्यक पोषक तत्वों को शामिल करके ठीक किया जा सकता है। इसके लिए हम कुछ निम्न प्रकार के तरीके उपयोग कर सकते हैं, जैसे विभिन्न प्रकार के भोजन को दैनिक आहार



में मौन भूख का प्रमुख कारण भोजन में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी का होना है। यदि भोजन में अलग अलग प्रकार के खाद्य पदार्थों जैसे; हरी सब्जियां, फल, दालें, अंकुरित अनाज, दुध, पनीर, मांस, अंडे, ड्राई फ्रूट्स आदि शामिल करके हिडन हंगर या मौन भूख को कम या समाप्त किया जा सकता है।

2. **भोजन तक पहुँच में सुधार करना:** पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने की दिशा में पहला कदम पौष्टिक भोजन तक पहुँच में सुधार करना है। इसे खाद्य पदार्थों पर सब्सिडी, खाद्य सहायता कार्यक्रम और सामाजिक सुरक्षा जैसी पहलों के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है।
3. **कृषि उत्पादकता में वृद्धि करना:** खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में कृषि महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सरकारें अनुसंधान और विकास में निवेश करके, किसानों को ऋण और कृषि आदानों तक पहुँच प्रदान करके तथा भोजन के परिवहन और भंडारण के लिये बुनियादी ढाँचे में सुधार करके कृषि उत्पादन को बढ़ावा दे सकती हैं।
4. **खाद्य विविधता को बढ़ावा देना:** व्यक्तियों की पोषण सम्बंधी जरूरतों को पूरा करने के लिये विविधतापूर्ण आहार महत्वपूर्ण है। सरकारें फलों, सब्जियों और पशु-स्रोतों से मिलने वाले खाद्य पदार्थों सहित पोषक तत्वों से भरपूर खाद्य पदार्थों के उत्पादन और उपभोग को बढ़ावा दे सकती हैं।
5. **पोषण सम्बंधी जागरूकता का प्रसार करना:** पोषण सम्बंधी जागरूकता का प्रसार करने से व्यक्तियों को उनके आहार के बारे में उचित निर्णय लेने के साथ स्वस्थ खान-पान को अपनाने में मदद मिल सकती है। इसके साथ सरकारें जन जागरूकता अभियानों, स्कूल-आधारित पोषण कार्यक्रमों और स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रमों में निवेश कर सकती हैं।
6. **स्वास्थ्य सम्बंधी समस्याओं का समाधान करना:** पोषण को प्रभावित करने वाली स्वास्थ्य सम्बंधी समस्याओं (जैसे कि संक्रामक रोग) को हल करना आवश्यक है। मलेरिया और डायरिया जैसे पोषण को प्रभावित करने वाले रोगों की व्यापकता को कम करने के लिये सरकारें सार्वजनिक

स्वास्थ्य पहलों में निवेश कर सकती हैं।

7. **सामाजिक सुरक्षा प्रणाली को मजबूत करना:** कमजोर लोगों की भोजन तक सुलभ पहुँच और उनकी पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा करने के रूप में नकद हस्तांतरण और खाद्य सहायता कार्यक्रम जैसी सामाजिक सुरक्षा प्रणाली को मजबूत करना आवश्यक है।
8. **सतत खाद्य उत्पादन को बढ़ावा देना:** सतत खाद्य उत्पादन प्रणालियों को बढ़ावा देने से यह सुनिश्चित करने में मदद मिल सकती है कि खाद्य उत्पादन पर्यावरण की दृष्टि से टिकाऊ और जलवायु परिवर्तन के दृष्टिकोण से उचित हो। इसमें स्थायी कृषि पद्धतियों में निवेश करना, भोजन की बर्बादी को कम करना और स्थानीय तथा क्षेत्रीय खाद्य प्रणालियों को प्रोत्साहन देना शामिल है।
9. **बलवर्धक भोजन:** फूड फोर्टिफिकेशन दो तरह से किया जा सकता है। कृत्रिम खाद्य संवर्धन एवं प्राकृतिक खाद्य बायोफोर्टिफिकेशन आदि। कृत्रिम खाद्य सुदृढ़ीकरण में खाद्य आपूर्ति की पोषण गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए चावल, दूध और नमक जैसे मुख्य खाद्य पदार्थों में आयरन, आयोडीन, जिंक और विटामिन 'ए' और डी जैसे एक या एक से अधिक सूक्ष्म पोषक तत्वों को कृत्रिम रूप से जोड़ा जाता है। जिसके परिणामस्वरूप अधिक सूक्ष्म पोषक तत्व जोड़ने से प्रसंस्करण के दौरान खोई हुई सूक्ष्म पोषक सामग्री को बहाल करने में मदद मिल सकती है। भारत में, "चावल का फोर्टिफिकेशन और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत इसका वितरण" एक केंद्र प्रायोजित पायलट कार्यक्रम है।

संक्षेप में हिंडन हंगर को कम करने के उपाय

1. हिंडन हंगर को कम करने के लिए अपने आहार में अधिक से अधिक पोषण शामिल करें। इसमें अनाज, मांस, फल और सब्जियां होनी चाहिए। हालांकि, इस तरह का आहार महंगा होता है। जीवन एसटीआर को बढ़ाने के लिए आप फोर्टिफाइड फूड का उपयोग कर सकते हैं। इसमें आवश्यक पौष्टिक तत्वों से भरपूर खाद्य पदार्थों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा अधिक होती है।
2. बायोफोर्टिफिकेशन से पारंपरिक भोजन में सूक्ष्म खाद्य पदार्थों की मात्रा बढ़ती है, जैसे-भुट्टे शकरकंद में विटामिन 'ए' की मात्रा, बाजरे और बीन्स में आयरन की मात्रा बढ़ाई जा सकती है। इस प्रक्रिया से गेहूँ और चावल में जिंक की मात्रा भी बढ़ाई जा सकती है। बायोफोर्टिफिकेशन खाद्य आहार में सूक्ष्म पोषक तत्वों में वृद्धि करनी की एक अच्छी विधि है। इसमें पारंपरिक या ट्रांसजेनिक विधियों का उपयोग करके सूक्ष्म पोषक सामग्री को बढ़ाने के लिए खाद्य फसलों को दूसरी अच्छी गुणवत्ता वाली फसल के साथ प्रजनन कराया जाता है। इसके परिणाम स्वरूप उत्पन्न खाद्य फसल कीटों के विरुद्ध अधिक रोग प्रतिरोधक क्षमता तथा अधिक सूक्ष्म पोषक तत्व युक्त होती है। ट्रांसजेनिक विधि का उपयोग करके गोल्डन राइस (सुनहरे चावल) की

किस्म को विकसित किया गया है, जिसमें विटामिन अधिक मात्रा में पाया जाता है। इसके अलावा प्रोटीन एमिनो एसिड, खनिज युक्त फसलों को विकसित किया गया है। आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों जो महंगे अधिक पोषक तत्व युक्त भोज्य पदार्थ खरीदने में सक्षम नहीं है। बायोफोर्टिफिकेशन की प्रक्रिया द्वारा सूक्ष्म पोषक तत्वों युक्त फसलों को विकसित करके, इस मौन भूख को कम या समाप्त किया जा सकता है। साथ ही अनीमिया से बचा जा सकता है।

भारत में हिंडन हंगर से निपटने के लिए सरकार उठाए गए कदम

1. **प्रधान मंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना:** यह योजना राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के 80 करोड़ लाभार्थियों को मुफ्त खाद्यान्न उपलब्ध कराने के लिए शुरू की गई है।
2. **प्रधान मंत्री मातृ वंदना योजना:** इस योजना के तहत पंजीकृत महिलाओं को उनके पहले जीवित बच्चे के जन्म पर 5,000 रुपये की वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इस सहायता का उद्देश्य गर्भवस्था और प्रसव के बाद की अवधि में महिलाओं को वेतन सहायता प्रदान करना और उनकी पौष्टिक भोजन सुनिश्चित करने में मदद करना है।
3. **पोषण अभियान (राष्ट्रीय पोषण मिशन):** इसका उद्देश्य बच्चों और महिलाओं के लिए प्रमुख पोषण मानदंडों में सुधार करना है।
4. **ईट राइट मूवमेंट:** इसका उद्देश्य सुरक्षित, स्वस्थ और टिकाऊ भोजन उपलब्ध कराने के लिए देश की खाद्य प्रणाली को बदलना है।
5. **समेकित बाल विकास योजनाएं:** ICDS के तहत प्रदान की जाने वाली छह सेवाओं में पूरक पोषण भी शामिल है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य बेहतर स्वास्थ्य के लिए आवश्यक आहार और औसतन हर दिन लिए जा रहे आहार के बीच के अंतराल को कम करना है।
6. **राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013:** इस अधिनियम का उद्देश्य भारत के 1.2 बिलियन लोगों में से लगभग दो-तिहाई लोगों को सब्सिडी पर खाद्यान्न उपलब्ध कराना है। यह कानून भोजन के अधिकार को एक संवैधानिक अधिकार के रूप में मान्यता देता है।

सारांश:

मौन भूख (जिसे सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के रूप में भी जाना जाता है) कुपोषण का एक ऐसा रूप है, जो आहार में आवश्यक विटामिन और खनिजों का पर्याप्त सेवन नहीं करने से होती है। सभी व्यक्तियों के लिये पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये एक व्यापक और समन्वित दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है, जिससे अल्पपोषण में योगदान देने वाले कई कारकों को हल किया जाता है। सरकारों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों, नागरिक समाज और निजी क्षेत्र सभी को इस लक्ष्य को प्राप्त करने में भूमिका निभानी आवश्यक है।

लेखकों से...

1. अपने तकनीकी एवं लोकप्रिय लेख हिन्दी में टाइप करवाकर भेजें।
2. रचना पृष्ठ के एक ओर उचित हाशिया और पंक्तियों के बीच स्थान छोड़कर सम्पादक, प्रसार दूत के पास यथा समय भेजें।
3. तकनीकी पर दी गई जानकारी की पूरी जिम्मेदारी लेखक की होगी। रचना को प्रकाशित करने या न करने का पूरा अधिकार सम्पादक मंडल को होगा।

प्रसार दूत का प्रकाशन समय

वार्षिक शुल्क 150/- मनीऑर्डर द्वारा भेजें।

शुल्क और सामग्री भेजने एवं पत्रिका मंगवाने का पता

प्रभारी अधिकारी

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

फोन: 011-25841670, 25841039

ई-मेल: incharge_atic@iari.res.in

पाठकों से...

प्रसार दूत में प्रकाशित किसी भी तकनीकी के विषय में अंश और समाधान हेतु आपके पत्रों का स्वागत है। विषयों पर अधिक जानकारी के लिए लेखक से सीधे भी सम्पर्क कर सकते हैं।

किसानों से...

यदि आपकी खेती व पशु-पालन संबंधी कोई विशेष समस्या है, तो लिखकर भेजें। हम प्रसार दूत के माध्यम से उसका समाधान आप तक पहुंचाएंगे।

अन्त में ...

आपकी खुशहाली ही हमारी सफलता है।

निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012 द्वारा प्रकाशित तथा

मैसर्स प्रिंटसी

फोन नंबर: +91-7827124201